प्रशाक
और यहा हम
हमारा जनता
— पद्म

प्रकाशक : प्रतिभा प्रतिष्ठान,
1661 दखनीराय स्ट्रीट, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-110002
सर्वाधिकार : सुरक्षित / संस्करण : प्रथम, 2002 / मूल्य : दो सौ रुपए
मुद्रक : प्रिंट परफैक्ट, दिल्ली / आवरण रेखाचित्र : मिकी पटेल / आवरण : राम गर्ग

SOCHI-SAMAJHI *poems* by Ashok Chakradhar Rs. 200.00
Published by Pratibha Pratishthan, 1661 Dakhni Rai Street,
Netaji Subhash Marg New Delhi-110002
SBN 81-88266-00-0

यह पुस्तक
अंतरंग साथी
पुरुषोत्तम प्रतीक
की
स्मृतियों के नाम

अभाव
ओर यही हम
हमारी जनत
— पद्म

अनुक्रम

अशोक
और यही ह
हमारी जनत
— पद्म

पूंछ और मूंछ

एक के पास मूंछ थी
एक के पास पूंछ थी,
मूंछ वाले को कोई
पूछता नहीं था
पूंछ वाले की पूछ थी।

मूंछ वाले के पास
तनी हुई मूंछ का
सवाल था
पूंछ वाले के पास
झुकी हुई पूंछ का
जवाब था।

पूंछ की
दो दिशाएं नहीं होती हैं
या तो भयभीत होकर
दुबकेगी
या मुहब्बत में हिलेगी,
मारेगी या मरेगी
पर एक वक़्त में
एक ही काम करेगी।
मूंछें क्यों अशक्त हैं,
क्योंकि दो दिशाओं में
विभक्त हैं।

एक झुकी मूछ वाला
झुकी पूंछ वाले से बोला—
यार,
मैं ज़िंदगी में
उठ नहीं पा रहा हूं।

पूंछ वाला बोला—
बिलकुल नहीं उठ पाओगे
कारण एक मिनट में
समझ जाओगे।
बताता हूं,
तुम बिना हाथ लगाए
अपनी मूंछ उठाकर दिखाओ
मैं अपनी पूंछ उठाकर दिखाता हूं।

जो उठा सकता है
वही उठ सकता है,
इसीलिए पूंछ वालों की सत्ता है।

टें बोल दो ना!

बच्चे ने रट लगा दी,
बार-बार कहे—
दादी!
तोते की तरह
टें बोलकर दिखाओ!

दादी भी अड़ गई—
क्यों बोलूं पहले ये बताओ?

आख़िरकार बच्चे ने राज़ खोला
मासूमियत से बोला—
कल रात जब
मैं झूटमूट को सो रहा था,
तब पापा ने
मम्मी से कहा था
कि अम्मा जब
टें बोलेगी तो
ख़ूब सारे रुपए मिलेंगे,
फिर हम
ये घर बेच के
दूसरा घर लेंगे।

किसी तरह
दादी ने रोक लिया रोना
बच्चा ज़िद करता रहा —
अब तो टें बोल दो ना!

जशा
और यही ह
हमारी जन.
— पद

राजकुमार का काला च

राजकुमार
अपना काला चश्मा
तब नहीं लगाता
जब धूप का उजाला हो,
तब नहीं लगाता
जब किरणों में ज्वाला हो,
तब नहीं लगाता
जब मौसम की मार हो,
तब नहीं लगाता
जब धूल का ग़ुबार हो।
इनसे तो वो
अपने चश्मे को बचाता है,
ख़ास-ख़ास मौकों पर ही
चश्मा लगाता है।

वह शंका के
लघु-दीर्घ अवसरों पर
काला चश्मा लगाता है,
टूटे दरवाज़े वाले
ग़ुसलख़ाने में
काला चश्मा लगाकर ही
नहाता है।
बाल कढ़ते समय—
काला चश्मा!
पुस्तक पढ़ते समय—
काला चश्मा!

अधी गली आते ही
काला चश्मा लगाएगा,
घर की बिजली जाते ही
काला चश्मा लगाएगा।

भिखारी को
भीख या सीख
कुछ नहीं देता है,
बस,
काला चश्मा लगा लेता है।

कल भैया के नाश्ते में
दही था,
उसकी प्लेट में नहीं था।
भैया कमाता है
चार पैसे लाता है,
नाश्ता तो करता है राजकुमार
पर करने से पहले
काला चश्मा लगाता है।

खर्चा बहुत ज्यादा है
कुछ काम-धंधा भी करोगे?

पिता बोले–
या सिर्फ़
आवारागर्दी का इरादा है?

राजकुमार जेब में
चश्मा टटोलता है रह-रह,

अशो
और यही ह
हमारी जन
— पद

नौकरी की जगह
टके से जवाब की तरह।

रास्ते में
मंदिर मस्जिद या
गुरुद्वारा आता है
वह तीनों जगह
सिर झुकाता है,
पर झुकाने से पहले
काला चश्मा लगाता है।

फिर वह
चश्मा लगाए लगाए ही
देखता है सिनेमा,
माधुरी, श्रीदेवी, रेखा या हेमा।

प्लीज़,
डा० नामवर सिंह जी,
प्लीज़,
बताइए कि आख़िर ये
काला चश्मा
है कौन सी चीज़?
उसकी अस्मिता है
या आत्म-निर्वासन
उसका विद्रोह है
या पलायन?
जीवन संगीत का रतौंधी अग
या दिन के उजाले से
उसका मोह भंग है?

दरअसल
काला चश्मा
उसकी शर्म-निरपेक्षता है,
वह बेशर्म ज़िंदगी को
अपनी शर्म के साथ देखता है।

आप ग़लत न समझें कहीं,
वह शर्म में निरपेक्ष है
शर्म से नहीं।

आज बहुत बेचैन है
राजकुमार
क्योंकि अभी अभी
उसे छद्म शर्म-निरपेक्ष बताकर
एक धिक्कार सेवक
उसका काला चश्मा तोड़ गया,
और ढेर सारे सवालों के
खौलते तालाब में
उसे नंगी आंख छोड़ गया।

अश
और यही
हमारी जन
— प

जंगल-गाथा

एक नन्हा मेमना
और उसकी मां बकरी,
जा रहे थे जंगल में
राह थी संकरी।
अचानक
सामने से
आ गया एक शेर,
लेकिन अब तक तो
हो चुकी थी बहुत देर।
भागने का नहीं था
कोई भी रस्ता,
बकरी और मेमने की
हालत ख़स्ता।
उधर शेर के क़दम
धरती नापें,
इधर ये दोनों
थर-थर कांपें।
अब तो शेर आ गया
एकदम सामने,
बकरी लगी जैसे-तैसे
बच्चे को थामने।
छिटक कर बोला
बकरी का बच्चा—
शेर अंकल!
क्या तुम हमें खा जाओगे
एकदम कच्चा?

शेर मुस्कुराया
उसने अपना भारी पंजा
मेमने के सिर पर फिराया--

हे बकरी कुल गौरव,
आयुष्मान भव!
चिरायु भव!
दीर्घायु भव!
कर कलरव!
हो उत्सव!
साबुत रहें तेरे सब अवयव।
आशीष देता ये पशु-पुंगव-शेर,
कि अब नहीं होगा कोई अंधेर।
उछलो, कूदो, नाचो
और जियो हंसते-हंसते
अच्छा बकरी मैया नमस्ते!

इतना कहकर शेर
कर गया प्रस्थान,
बकरी हैरान–

बेटा ताज्जुब है,
भला ये शेर किसी पर
रहम खाने वाला है,
लगता है जंगल में
चुनाव आने वाला है।

□

पानी से निकलकर
मगरमच्छ किनारे पर आया,

इशारे से उसने
बंदर को बुलाया।
बंदर गुर्राया–

खों खों
क्यों,
तुम्हारी नज़र में तो
मेरा कलेजा है?

मगरमच्छ बोला–

ना ना ना ना
ना भैया
तुम्हारी भाभी ने
ख़ास तुम्हारे लिए
सिंघाड़े का
अचार भेजा है।

बंदर सोचे
ये क्या घोटाला है,
लगता है जंगल में
चुनाव आने वाला है।
लेकिन बोला–

वाह!
अचार,
वो भी सिंघाड़े का,
यानी नदी के कबाड़े का!
बड़ी ही दयावान
तुम्हारी मादा है,
लगता है शेर के ख़िलाफ़
चुनाव लड़ने का इरादा है।

– कैसे जाना, कैसे जाना?

– ऐसे जाना, ऐसे जाना
कि आजकल
भ्रष्टाचार की नदी में
नहाने के बाद
जिसकी भी छवि स्वच्छ है,
वही मगरमच्छ है।

□

शेर ने कुएं में झांका,
वहां पहले से बैठा था
एक शेर बांका।
ऊपर वाले शेर ने
दहाड़ लगाई,
प्रतिध्वनि नीचे से आई–
मत समझना मुझे
अपनी परछाईं।
बहुत देर पहले का
आया हुआ हूं,
तुम्हारी महत्वाकांक्षाओं का
सताया हुआ हूं।
बाहर निकलूंगा
दहाडूंगा
और ऐंठ जाऊंगा,
पांच करोड़ दिलवाओगे तो
फिर से
पानी में बैठ जाऊंगा।

□

थोड़ी देर बाद
एक रोटी का बंटवारा कराने
आई दो बिल्ली,
बंदर ने
बिल्कुल नहीं उड़ाई
उनकी खिल्ली।
बड़ी गंभीरता से
अपना झोला खोला,
और ठीक वैसी ही
एक रोटी निकालते हुए बोला–

अरे!
किस बात की लड़ाई है,
दोनों एक-एक
साबुत रोटी खाओ न
और लो
ऊपर से मलाई है।

बिल्लियां हैरान,
दोनों के
खड़े हो गए चारों कान–

ये क्या गड़बड़झाला है,
लगता है जंगल में
चुनाव आने वाला है।

पास में बैठा
दूसरा बंदर बोला–

देखिए,

ठीक पहचाना है,
और आपको एक
रहस्य बतलाना है
कि जो असंभव था
ऊ संभव हो गया है,
भेड़िया दल (भ)
गीदड़ दल (ग)
तेंदुआ दल (तूं)
और घोंदुआ दल (पूं) का
हमरे बानर दल में
बिलय हो गया है।

जंगल का रजनीती में
जितना भी अनाथ है,
ऊ सब हमरे साथ है।
अब त इस जाइंट मोर्चा को
जिताना है,
जंगल से आतंकवा को मिटाना है।
देखिए, आप हमरा पड़ौसी हैं,
और असल बात ई
कि सेर का मौसी हैं।
जितना भोट दिलवाएंगी,
उतना चूहा पाएंगी!

□

एक चुहिया
दौड़ी-दौड़ी बिल में आई,
चूहों के सामने चिल्लाई—

ज
आर यही
हमारी ज
—र

ऊपर दा बिल्लिया
बातें कर रही हैं,
रामनामी ओढ़कर
सबसे मुलाक़ातें कर रही है।
अपने पंजों के
सारे नाख़ून
कटाकर आई हैं,
पड़ोस के चूहों को
पटाकर आई हैं।
कहती हैं–
हमारी अनऔथराइज़्ड
चूहा कॉलोनी नंबर दो को भी
पास कर दिया जाएगा,
बिजली पानी का
इंतज़ाम भी
ख़ास कर दिया जाएगा।

एक बुज़ुर्ग चूहा बोला–
चुप रहो,
उनकी बातों में मत बहो।
अपना तो इस बिल के
अंधेरे में ही उजाला है,
पर लगता है जंगल में
चुनाव आने वाला है।

□

एक ओर भौंक-भौंक
परेशान श्वान थे,

एक दूसरे के
खीच रहे कान थे।

चिड़िया बोली–
इनमें से कुछ तो
वाकई दुष्ट हैं,
टिकिट नहीं मिला है न
इसलिए
असंतुष्ट हैं।

□

तो जंगल में थे
तरह तरह के
नारे और वादे,
पजों में
नाखूनों में
छिपे हुए ख़ूंख़ार इरादे।

चूहों से कहा गया
चील नहीं होगी,
चील से कहा गया
चूहा सप्लाई में
ढील नहीं होगी।

भालुओं से कहा गया
सारे मधुमक्खी छत्तों पर
आपका रिज़र्वेशन होगा,
मधुमक्खियों से कहा गया

अ
और यही
हमारी ज
—।

भालुओं से तुम्हारा
प्रोटैक्शन होगा।

हिरनों से कहा गया
जंगल के जीवन में
अहर्निश सवेरा होगा,
और हम जैसे
उल्लुओं से कहा गया
अजी,
दिन में भी अंधेरा होगा।

□

इधर
झूमता हुआ उन्माद में,
शेर आया
अपनी मांद में।
बोला—
ओ, पूरा जंगल घेरनी
मेरी स्वीट-हार्ट शेरनी
आइ लव यू
ईलू ईलू!

शेरनी बोली—
डार्लिंग!
आइ लव यू टू
ईलू ईलू!
लेकिन आज लग रहे हो
ढीलू ढीलू!!

शेर बोला—
ऐसा!
ढीलू ढीलू!!
तो ला थोड़ी-सी
विस्की पी लूं।

शेरनी बोली—
विस्की तो ज़रूर पिलाऊंगी,
उसमें
बरफ़ और
सोडा भी मिलाऊंगी,
पर मुझे भी तो
कुछ दिला दो,
एक ताज़ा मुलायम सा
ख़रगोश खिला दो।

सिंहनी के कान में हुआ
फुसफुसाहट का सिंहनाद—
ख़रगोश तो खिलाऊंगा डार्लिंग
पर चुनावों के बाद।

□

ये बेचारे
छोटे-छोटे जानवर
चूहा, ख़रगोश, गिलहरी,
निरीह हिरन, भेड़, बकरी,
ये नहीं जानते हैं कि
शेर हो या तेंदुआ

भगर्रा हो गया भेड़िया
ये सारे के सारे
वनैले हिंस्र पशु
आग से डरते हैं,
कैसे भी गब्बर या बब्बर
क्यों न हों
आग का सामना नहीं करते हैं।

जिस दिन भी
जंगल की जनता में
आग की चेतना वाली
एक भी मशाल आ जाएगी,
सच कहता हूं
उस दिन से जंगल की
निज़ामत बदल जाएगी।

सपनो के राजकुमारो के लिए

एक थे वर्मा जी
नहीं नहीं शर्मा जी
या कहें भाऊ जी
नहीं नहीं साहू जी!
क्या फ़र्क़ पड़ता है नाम से,
हमारा तो मतलब है
उनके काम से।

वे रहते थे रामपुर में
नहीं नहीं धामपुर में
या चलिए बुरहानपुर में
हटाइए फ़ाइनल करते हैं
कानपुर में।
क्या फ़र्क़ पड़ता है शहर से,
हमारा तो मतलब है
शहर के ज़हर से।

उनके थीं तीन बेटियां—
उषा, सुधा, विमला
नहीं
कनक, लता, कमला
या जूली, जूही, जुलका
हटाइए फ़ाइनल करते हैं
पूनम, ममता, अलका।
लड़कियां ही तो थीं
क्या फ़र्क़ पड़ता है?

पड़ता है,
लड़कियों से तो भाईसाहब
बहुत फ़र्क़ पड़ता है।
हमारे यहां लड़कों का बाप
ज़मीन पर
बिना पंख उड़ता है,
और लड़कियों का
धरती की सतहों में सड़ता है,
लड़कियों से तो जनाबेआली
बहुत फ़र्क़ पड़ता है।

दरअसल
लड़कियों के मामले में
हमारा समाज
अधकचरा है,
यहां लड़की
फूटी हुई क़िस्मत
कोख का कचरा है।
घर में चंद रोज़ है,
और जितने दिन है
उतने दिन बोझ है।
मां के लिए यंत्रणा है
बाप की यातना है,
अब तो डाक्टरी तरीक़े हैं
धरती पर आना भी मना है।
कहीं सौ–सौ टोटके
कहीं पैदा होते ही घोटके
मारने का रिवाज है
कैसा समाज है!

लड़की का पैदा होना
मां-बाप के दिल में
कलेजे में
निगाहों में गड़ता है,
लड़की होने से तो भाईसाहब
बहुत फ़र्क़ पड़ता है।

ख़ैर,
बात शुरू करें
लाग-लपेट के बग़ैर-
एक थे साहू जी
पूनम, ममता, अलका के बापू जी
रहते थे कानपुर के
कुली बाज़ार में
बेटियों की शादी के
इंतज़ार में।
दिन में जितने घंटे
नौकरी करते थे
उससे ज़्यादा लड़के देखते थे,
और जितने लड़के देखते थे
उनसे ज़्यादा
लड़कों के सपने देखते थे
कि ख़ूबसूरत, बलशाली बेशुमार
तीन राजकुमार
लिए हुए हाथों में चंदनहार
बिखराते हुए बहार
फेंकते हुए फुहार
सद्व्यवहार, होनहार
चले आ रहे हैं

और यही
हमारा

मरे घर के द्वार,
द्वार पर टंगे है बंदनवार।

कि अचानक
आसमान गूंजता है–
एक लाख!
दो लाख!!
दस लाख!!!
बोल साहू है तेरी हैसियत
है इतनी साख?

बंदनवार में लटकी पत्तियां
कटार बन गईं,
बल्बों की जगर–मगर पंक्तियां
ख़ूंख़ार दांतों की
क़तार बन गईं।
शामियाना दुर्वासा हो गया,
गुलाबजल का पात्र
गंडासा हो गया।

कैसे हो गया,
ये कैसे हो गए?
राजकुमार राक्षस कैसे हो गए?
उजाले अमावस कैसे हो गए?
क्योंकि हत्यारी हवस पैसे हो गए

साहू बैठे-बैठे चौंकते हैं,
वे दिन–रात
ऐसे ही सपने देखते हैं।

एक दिन
लखनऊ गए बारात में
पत्नी और
छोटे बच्चों के साथ में।
पूनम, ममता, अलका
तीनों बहनें
बहनों से ज़्यादा सहेली
घर में रह गईं अकेली।

आकाश में उड़ती हुई चीलों ने
इन लड़कियों को देखा,
सलीब में ठुकी हुई कीलों ने
इन लड़कियों को देखा।
मौत की कुतिया
दबे पांव
घर में घुस आई,
बदक़िस्मत लड़कियों ने
कुंडी अंदर से लगाई।

बड़की पूनम बोली–
  ज़माना देखेगा
  हौसले हम लड़कियों के,
  ममता
  परदे ठीक से बंद कर दे
  खिड़कियों के।
  मेरी लाडो
  मेरी छोटी बहन अलका।
  जी भारी है या हलका?
  डर तो नहीं लग रहा?

और यह
हमारी
—

अलका बोली
क्या कहा
सुन लो दीदी,
मैं नहीं हूं
इस बेकार-सी
ज़िंदगी की नदीदी!
कौन सुने
लड़के वालों के बहाने,
मम्मी के ताने।
एक तुम्हारी शादी से
पापा टूट लेंगे,
मेरी बारी आने तक तो
उनके प्राण ही छूट लेंगे।
सच दीदी
तुमने बहुत अच्छा
रास्ता निकाला है,
इस अंधेरी ज़िंदगी से तो
मौत में ही उजाला है।

परदा ठीक करते हुए
और लंबी सांस भरते हुए
ममता ने कहा–
कैसे पटर-पटर बोलती है
बातों में फ़िलासफ़ी घोलती है
देखो, देखो
ये क्या जानती है
ज़िंदगी और मौत के उजाले क
पूनम दीदी मैं कहूंगी
और कहे बिना नहीं रहूंगी

गुस्से को दिल से उतार लो
एक बार फिर से विचार लो।

— बावली,
इसमें गुस्सा है न उतावली।
इसी में है
हम तीनों की भली,
फिर से क्या विचारें
तू खुद बता मंझोली?

इस पर ममता नहीं
छोटी अलका बोली—
हम तीनों में
बीच की हैं न
ममता दीदी
इसीलिए बीच की बात करती हैं,
मुझे तो लगता है
मरने से डरती हैं।

— अलका!
पूनम ने डांटा।
पलभर को
छा गया सन्नाटा।
फिर ममता से बोली—
पगली है यह अलका,
मरना तो मामला है
पल दो पल का।
चलो सोचते हैं दोबारा,
क्या जाता है हमारा!

ममता बोली

छोड़िए
मुझे अब कुछ नहीं
सोचना-समझना है,
मैं तैयार हूं
करो जो भी करना है।

पूनम बोली--

ऐसे नहीं ममता!
मत करो वह काम
जब तक
मन को नहीं जमता।
कोई जबरदस्ती है?
पर मेरी मन्नो
इतना कहूंगी
हमारी कोई
जरूरत नहीं है किसी को
हमारी जान बहुत सस्ती है।
दोबारा सोचूं
तिबारा सोचूं
चौबारा सोचूं
अठबारा सोचूं
पर अब नवीं बार
पड़ोसन भाभी के गहने
और उन्हीं की साड़ी पहन
तुम्हारी बनाई पकौड़ियां
पापा की लाई मिठाइयां
और चाय की प्यालियां लेक
भूखे भेड़ियों के बीच

अपनी नुमाइश नही लगाऊगी,
पापा को बार-बार
ज़लील नहीं कराऊंगी,
कि वो आएंगे
खाएंगे, निहारेंगे, घूरेंगे
ऊटपटांग सवाल पूछेंगे--
एम॰ए॰ हिंदी में किया है?
कौन-सी पोज़ीशन थी?
कॉलेज लड़कियों का था
या को-एजूकेशन थी?

फिर मुस्कुराएंगे,
खुसुर-पुसुर करेंगे
पैसों के लिए
और चले जाएंगे--
जी, लड़के की बुआ है
पूछ कर बताएंगे।
जो लाख पर राज़ी था
दो लाख मांगता है कमीना,
मुश्किल कर दिया है जीना।
पहली शादी में ही
लाखों लग जाएंगे,
तो बाकी चार के लिए
कहां से लाएंगे?
मैंने कहा था
इस ज़माने से नहीं डरूंगी
शादी नहीं, नौकरी करूंगी।
पर इसमें उन्हें
बेइज़्ज़ती लगती है,

ओर यह
हमारी
—

उनकी ईगो जगती है
लड़की से काम नहीं कराएंगे,
तो क्या करेंगे
खुद को बेच के आएंगे!
औलादों के लिए
दहेजी जल्लादों के लिए!!
जल्लाद,
जिन्हें बाजार में सजी हुई
सारी चीज़ें चाहिए
जिनके ऐड टी॰वी॰ दिखाता है
विविध भारती जिनके गाने गाता है
अख़बार में जितनी चीज़ों के
विज्ञापन आते हैं,
वो सब
दहेजी दानवों के
दिमाग़ों में
कुलबुलाते हैं।
उनमें से
एक भी चीज़ नहीं भूलेंगे,
लड़की के बाप की
लाश से वसूलेंगे।

ममता सोच तो
कितनी मंहगाई है,
सारी आग
इस बाज़ार ने लगाई है।
फ़्रिज, टी॰वी॰, वी॰सी॰आर॰
मिक्सी, स्कूटर, कार
डबल बैड, सोफ़ा तो देंगे ही

क़ालीन और झाड़-फ़ानूस भी चाहिए,
फिर लड़की को जलाने के लिए
मिट्टी का तेल
और फूस भी चाहिए।

ममता बोली--
रहने दो, रहने दो!

पूनम ने कहा--
मन्नो, रोको नहीं कहने दो।
क्या फ़ायदा हुआ
हमारी पढ़ाई का
सिलाई, कढ़ाई, बुनाई का?
सच्चाई ये है कि अब हम
इस घर के लिए
ग़ैरज़रूरी हैं,
मां-बाप के लिए मजबूरी है।
हमारा ध्यान आने पर
वो दर्द से कराहते हैं,
हम न रहें
ऐसा वो अंदर-ही-अंदर चाहते हैं।

प्याला क्या टूटा अलका से
कि पीट दिया,
चोटी पकड़ के घसीट दिया।
दरसल मम्मी हमें नहीं मारतीं
खुद को
अपनी आत्मा को मारती हैं,
हमें नहीं कोसती हैं

और य
हमारा
—

अपन दर्द भर
दिल को मसोसती हैं।
हम पर नहीं चिल्लाती हैं
अपनी मजबूरियों पर
झल्लाती हैं।

तभी अलका
एक आसमानी साड़ी को
मोड़कर
उसे ओढ़नी-सा ओढ़कर
थोड़ा-सा घूंघट किए हुए,
हाथों में
नाश्ते की ट्रे लिए हुए,
नखरीली चाल में,
शर्मीली बनकर,
बोली सहमकर—

भई,
अब बहस बंद कर लो,
हम दिखने आई हैं
कोई हमें भी पसंद कर लो।
दहेज में सौत भी मिलेगी,
हमारे साथ
हमारी मौत भी मिलेगी।

ममता बोली—

ये क्या मज़ाक है?

अलका बोली—

क्यों दीदी ख़तरनाक है?

चला छाडो नाश्ता करो
मेरे मज़ाक से मत डरो।
और अब भला
हम क्यों डरेंगी,
लेकिन मरना है तो
खा-पी के मरेंगी।
दीदी, ये साड़ी ठीक है?
थोड़ी बारीक है!

पूनम बोली—
और कमज़ोर है।
एक झटके में फट जाएगी,
चिकनी है न
गांठ भी नहीं लग पाएगी!

ममता अचानक चिल्लाई,
उसे आ गई रुलाई।
पर पूनम और अलका
चुप रहीं,
वो तो हिली भी नहीं।
न ममता को चुप कराया
न धीरज बंधाया,
उल्टे नाश्ता अपनी ओर सरकाया।

अलका ने जमकर खाया,
पूनम ने मुंह झुठलाया।
ममता ने छुआ तक नहीं,
रोती रही, सुबकती रही।
फिर पूनम ने चिट्ठी लिखी

और य
हमारी
–

मम्मी पापा के नाम
कि हमें माफ़ करना,
हम जा रही हैं
अपनी मरज़ी से
इसलिए पुलिस वालो
मम्मी-पापा के साथ
इंसाफ़ करना।
आदि आदि।

फिर पूनम ने कहा–
अलका, जा अचार ढक दे,
मम्मी के कपड़े
अलमारी में रख दे।
दूध तो उनके आने तक
फट जाएगा. . .

सुबकती हुई ममता बोली–
और कलेजा भी फट जाएगा

कहने लगी पूनम–
तू है तो
उन्हें तसल्ली दिलाने को।

ममता फूट पड़ी–
दीदी, ऐसी बातें मत करो
जी के जलाने को।
मैं क्या तुम्हारे बिना
सड़ूंगी, गलूंगी?
मैं भी साथ चलूंगी।

फिर मज़बूत दिल से,
ममता ने भी
एक लाइन लिख दी पेंसिल से—
मैं भी अपनी इच्छा से
आत्महत्या कर रही हूं—
ममता।

अद्‌भुत थी
इन लड़कियों की क्षमता।
कैसे तो चारपाई लगाई
कैसे स्टूल रखा,
कैसे साड़ी अटकाई
कैसे कुंडा परखा?
फिर सब कुछ ठीक-ठाक करके
देखा चारों ओर घर के
फिर एक-दूसरे की आंखों में झांका,
जिनमें टहलता था
यमराज बांका।
फिर मशीन-सी हो गईं
तीनों कन्याएं,
न कुछ बोलें
न पलक झपकाएं।
एक-दूसरे से लिपट गईं,
फिर अचानक हट गईं।
मशीन की तरह बढ़ीं,
मशीन की तरह ऊपर चढ़ीं।
मशीन की तरह फंदा लगाया,
मशीन की तरह उसे
गर्दन में फंसाया।

बस एक क्षण के लिए लड़कियां बनीं
जब पलकें झपकाईं,
और एक-दूसरे की तरफ देखकर
दर्द से मुस्कुराईं।
फिर मशीन की तरह
देश, समाज
परिवार, रिश्तेदार
सबको भूल गईं
और एक झटके में झूल गईं।

अरे, अरे
कैसा कायरतापूर्ण दुस्साहस किया
इन तीनों ने
ऐसा तो कोई
हरगिज़, हरगिज़, हरगिज़ न करे,
इसके स्थान पर
हालात से लड़े!
पर कहां हो
साहू के सपने के राजकुमारो।
इन लटकती हुई
लाशों को निहारो,
कुछ सोचो, कुछ विचारो।
आओ तुम्हारा इंतज़ार है।
आओ
लेकिन इस तरह
कि बंदनवार की पत्तियां
कटार न हो जाएं,
द्वार के तोरण
तलवार न हो जाएं,

शामियाना
दुर्वासा न बन जाए,
गुलाबजल के पात्र
गंडासा न बन जाएं,
घर वाले तुम्हारे
दहेज के धंधे में
अंधे न हो जाएं,
हाथों में चंदनहार
लड़कियों की गर्दनों के
फंदे न हो जाएं।

राजकुमारो आओ,
यहां सर झुकाओ!
ये उन तीनों लड़कियों की
मज़ार है,
आओ
दहेज न लेने की
क़सम खाकर आओ
समाज को तुम्हारा इंतज़ार है।
आओ, राजकुमारो!

खारा पानी

तेरे पास
कम खारा पानी है
इसीलिए ऐसा होता है,
समंदर के पास बहुत है
देख
वो कहां रोता है!

बहरे या गहरे

अचानक तुम्हारे पीछे
कोई कुत्ता भौंके,
तो क्या तुम रह सकते हो
बिना चौंके?

अगर रह सकते हो
तो या तो तुम बहरे हो,
या फिर बहुत गहरे हो!

चालीसवा राष्ट्रीय महोत्सव

पिछले दिनों
चालीसवां
राष्ट्रीय भ्रष्टाचार महोत्सव
मनाया गया,
सभी सरकारी संस्थानों को
बुलाया गया।
भेजी गई सभी को
निमंत्रण पत्रावली,
साथ में
प्रतियोगिता की नियमावली।

लिखा था–
प्रिय भ्रष्टोदय!
आप तो जानते हैं
भ्रष्टाचार हमारे देश की
पावन, पवित्र, सांस्कृतिक विरासत है,
हमारी जीवन-पद्धति है
हमारी मजबूरी है
हमारी आदत है।
आप अपने
विभागीय भ्रष्टाचार का
सर्वोत्कृष्ट नमूना दिखाइए,
और उपाधियां तथा
पदक-पुरस्कार पाइए।
व्यक्तिगत उपाधियां हैं–
भ्रष्ट शिरोमणि, भ्रष्ट भूषण

भ्रष्ट विभूषण और भ्रष्ट रत्न,
और यदि सफल हुए
आपके विभागीय प्रयत्न,
तो कोई भी पदक, जैसे–
स्वर्ण गिद्ध
रजत बगुला
या कांस्य कउआ दिया जाएगा,
सांत्वना पुरस्कार में
प्रमाण-पत्र और
विस्की का
एक-एक पउआ दिया जाएगा।
प्रविष्टियां भरिए
और न्यूनतम योग्यताएं
पूरी करते हों तो
प्रदर्शन अथवा प्रतियोगिता-खंड में
स्थान चुनिए।

तो कुछ तुले
कुछ अनतुले भ्रष्टाचारी
कुछ कुख्यात
निलंबित अधिकारी
जूरी के सदस्य बनाए गए,
मोटी रक़म देकर बुलाए गए।
मुर्ग तंदूरी, शराब अंगूरी
और विलास की सारी चीज़ें ज़रूरी
जुटाई गईं,
और निर्णायक-मंडल
यानि की जूरी
को दिलाई गई।

एक हाथ से
मुर्गे की टाग चबाते हुए,
और दूसरे से
चाबी का छल्ला घुमाते हुए,
जूरी का एक सदस्य बोला--
मिस्टर भोला!
यू नो,
हम ऐसे करेंगे
या वैसे करेंगे
या जी चाहे जैसे करेंगे,
बट बाय द वे
भ्रष्टाचार नापने का
पैमाना क्या है
हम फ़ैसला कैसे करेंगे?

मिस्टर भोला ने
सिर हिलाया,
और
हाथों को घूरते हुए फ़रमाया--
चाबी के छल्ले को
टेंट में रखिए
और मुर्गे की टांग को
प्लेट में रखिए
फिर सुनिए मिस्टर मुरारका।
भ्रष्टाचार होता है।
चार प्रकार का।

पहला-- नज़राना!
यानि नज़र करना, लुभाना।

य काम होने से पहले
दिया जाने वाला आफ़र है,
और पूरी तरह से
देने वाले की
श्रद्धा और इच्छा पर निर्भर है।

दूसरा– शुकराना!
इसके बारे में क्या बताना।
ये काम होने के बाद
बतौर शुक्रिया दिया जाता है
इसमें लेने वाले को
आकस्मिक प्राप्ति के कारण
बड़ा मज़ा आता है।

तीसरा– हक़राना!
यानि हक़ जताना।
हक़ बनता है जनाब,
बंधा-बंधाया हिसाब
आपसी सैटिलमैण्ट
कहीं दस परसैण्ट
कहीं पंद्रह परसैण्ट
कहीं बीस परसैण्ट,
लेकिन
पेमैंट से पहले पेमेंट।

चौथा– ज़बराना!
यानि ज़बर्दस्ती पाना।
ये देने वाले की नहीं
लेने वाले की

इच्छा क्षमता ओर शक्ति पर
डिपेंड करता है
इसमे मना करने वाला
मरता है।

क्योंकि लेने वाले के पास
पूरा अधिकार है,
दुत्कार है, फुंकार, फटकार है।
दूसरी ओर
न चीत्कार न हाहाकार
केवल मौन स्वीकार होता है,
इसलिए देने वाला
अकेले में रोता है।
तो यही भ्रष्टाचार का
सर्वोत्कृष्ट प्रकार है,
जो भ्रष्टाचारी
इसे न कर पाए
उसे धिक्कार है।

नजराना का एक पॉइन्ट
शुकराना के दो
हक़राना के तीन
और ज़बराना के चार,
हम भ्रष्टाचार को
नम्बर देंगे इस प्रकार।

रात्रि का समय,
जब बारह पर आ गई सुई।
तो प्रतियोगिता शुरू हुई।

सर्वप्रथम जंगल विभाग आया
जंगल अधिकारी ने बताया—
इस प्रतियोगिता के
सारे फ़र्नीचर के लिए
चार हज़ार चार सौ बीस पेड़
कटवाए जा चुके हैं,
और एक-एक डबल बैड
एक-एक सोफ़ा-सैट
जूरी के हर सदस्य के घर
पहले ही
भिजवाए जा चुके हैं।
हमारी ओर से
भ्रष्टाचार का यही नमूना है,
आप लोग सुबह जब
जंगल जाएंगे
तो स्वयं देखेंगे कि
जंगल का एक बड़ा हिस्सा
अब बिलकुल सूना है।

अगला प्रतियोगी
पी॰डब्ल्यू॰डी॰ का,
उसने बताया अपना तरीक़ा—
हम लैण्ड-फ़िलिंग
या अर्थ फ़िलिंग करते हैं
यानी ज़मीन के
निचले हिस्सों को
ऊंचा करने के लिए
मिट्टी भरते हैं।
हर बरसात में

मिटटी बह जाती है
और समस्या
वही की वही रह जाती है।
जिस टीले से
हम मिट्टी लाते हैं,
या कागज़ों पर
लाया जाना दिखाते हैं,
यदि सचमुच हमने
उतनी मिट्टी को
डलवाया होता,
तो आपने उस टीले की जगह
पृथ्वी में
अमरीका तक का आर-पार
गड्ढा पाया होता।
लेकिन टीला
ज्यों-का-त्यों खड़ा है,
उतना ही ऊंचा
उतना ही बड़ा है।
मिट्टी डली भी
और नहीं भी,
ऐसा नमूना
नहीं देखा होगा कहीं भी।

क्यू तोड़कर अचानक,
अंदर घुस आया
एक अध्यापक–

हुजूर,
मुझे आने नहीं दे रहे थे,
शिक्षा का भ्रष्टाचार

बताने नही दे रहे थे
प्रभो!

एक जूरी मैम्बर बोला--
चुप रहो।
चार ट्यूशन क्या कर लिए कि
खुद को
भ्रष्टाचारी समझने लगे,
प्रतियोगिता में शरीक़ होने का
दम भरने लगे।
तुम क्वालीफ़ाई ही नहीं करते
बाहर जाओ,
नैक्स्ट, अगले को बुलाओ।

अब आया एक पुलिस का दरोग़ा
बोला--
हम न हों
तो भ्रष्टाचार कहां होगा?
जिसे चाहें पकड़ लेते हैं
जिस चाहें रगड़ देते हैं।
हथकड़ी नहीं डलवानी
एक हज़ार ला,
जूते नहीं खाने
दो हज़ार ला।
पकड़वाने के पैसे
छुड़वाने के पैसे
ऐसे भी पैसे
वैसे भी पैसे,
बिना पैसे

हम हिले कैसे?
जमानत तफ्तीश इन्वैस्टीगेशन
इन्क्वायरी, तलाशी
या ऐनी सिचुएशन,
अपनी तो चांदी है,
क्योंकि हर स्थिति बांदी है।
डंडे का ज़ोर है,
क्योंकि डंडा कठोर है।
हम अपराध मिटाते नहीं हैं
अपराधों की फ़सल की
देखभाल करते हैं,
वर्दी और डंडे से
कमाल करते हैं।

फिर आए क्रमशः
एक्साइज़ वाले
स्लम वाले, कस्टम वाले
डी०डी०ए० वाले
टी०ए०डी०ए० वाले
रेल वाले, खेल वाले
हैल्थ वाले, वैल्थ वाले
पुरातत्व वाले, स्थापत्य वाले
रक्षा वाले, खाद्य वाले
ट्रांसपोर्ट वाले, एअरपोर्ट वाले,
सभी ने बताए
अपने-अपने घोटाले।

प्रतियोगिता पूरी हुई,
तो जूरी के एक सदस्य ने कहा–

देखो भई
स्वर्ण गिद्ध तो
पुलिस विभाग को जा रहा है,
हां, रजत बगुले के लिए
पी०डब्ल्यू०डी०
सामने आ रहा है।
और ऐसा लगता है हमको,
कि कांस्य कउआ मिलेगा
एक्साइज़ या कस्टम को।

ये निर्णय-प्रक्रिया
चल ही रही थी कि
अचानक मेज़ फोड़कर,
धुए के बादल
अपने चारों ओर छोड़कर,
श्वेत धवल खादी में लक-दक
टोपी धारी
गरिमा महिमा उत्पादक
एक विराट व्यक्तित्व
प्रकट हुआ,
चारों ओर
रोशनी और धुंआ।

जैसे गीता में
भगवान श्रीकृष्ण ने
अपना विराट स्वरूप दिखाया
और महत्व बताया था
उतना पवित्र-पावन तो नहीं
पर कुछ-कुछ वैसा ही था नज़ारा,

विराट भ्रष्ट नेताजी ने
मेघ-मंद्र स्वर में उच्चारा--
मेरे हजारों मुंह
हजारों हाथ हैं,
हजारों पेट हैं
हजारों ही लात हैं।

नैनं छिन्दन्ति पुलिसा-वुलिसा
नैनं दहति संसदा,
नाना विधानि रूपाणि
नाना हथकंडानि च।।

ये सब भ्रष्टाचारी
मेरे ही स्वरूप हैं,
मैं एक हूं लेकिन मेरे
करोड़ों रूप हैं।

अहमपि नजरानम्
अहमपि शुकरानम्
अहमपि हक़रानम्
च जबरानम् सर्वमन्यते।

भ्रष्टाचारी मजिस्ट्रेट
रिश्वतख़ोर थानेदार
इंजीनियर
ओवरसीयर
रिश्तेदार, नातेदार !
मुझसे ही पैदा हुए
मुझमें ही समाएंगे,

पुरस्कार ये सार मेरे हैं
मेरे पास आएंगे।

अचानक स्वर्ण गिद्ध
रजत बगुला, कांस्य कउआ
अपने-अपने पंख
फड़फड़ाने लगे,
नेता जी पर
फूल बरसाने लगे।

जूरी के मेम्बरान पर भी
प्रसन्नता छाई,
उन्होंने मिलकर
नेता जी की एक आरती गाई—

अनेक रैली, अनेक थैली
अनेक ठाठम् च बाटम् अनेक।
अनेक दारा, अनेक दारू
अनेक कुर्सी च खाटम् अनेक।
अनेक बंगले, अनेक कोठी
अनेक फ़ार्मम् च प्लाटम् अनेक।
अनेक डण्डम् अनेक गुण्डम्
अनेक लूटम् च पाटम् अनेक।
अनेक बदलम्, दलम् अनेक
अनेक थूकस्य चाटम् अनेक।
अनेक चमचे, अनेक गुर्गे
अनेक सीढ़ी च घाटम् अनेक।
अनेक जिव्हा, अनेक जेबम्
अनेक मारम् च काटम् अनेक।

ओम् प्रचण्डरूपा डडानि नमो नमः
सर्वव्यापी गुंडानि नमो नमः
सर्वोपरि हथकंडानि नमो नमः

ओम् भ्रष्टमिदं भ्रष्टमदम्
भ्रष्टात् भ्रष्टमुदच्यते,
भ्रष्टस्य भ्रष्टमादाय
भ्रष्टमेवावशिष्यते।

ओम् भ्रष्ट भ्रष्टं भ्रांति।

अस्पतालम् खड खड काव्य

हुआ यों कि
खोपड़ी में निकल आई एक फुंसी,
मस्तिष्क में लगने लगी घुन सी।

कविवर आदित्य बोले—
अशोक भोले!
खोपड़ी में ज्यों हथौड़ी,
फुंसी ये बनेगी फोड़ी,
साइज़ बढ़ेगा तुम नापते ही रहना।
ब्रह्मरंध्र की समस्त
शिरा झनझना जाएंगी
फूटेगा जो फोड़ा तुम कांपते ही रहना।
सारी कविताएं बाहर
आ जाएंगी फूटने से,
कुछ न बचेगा औ' विलापते ही रहना,
कविसम्मेलनों में
जाएंगे सारे ही कवि
और तुम प्यारेलाल टापते ही रहना।

तो साब!
जेब में डाली थोड़ी सी करैंसी
और पहुंच गए अस्पताल की इमरजैंसी।

फुंसी देखते ही डॉक्टर हंसे,
बोले—
औशोक जी खूब फौंसे!

फुसी आ थी चुनमुन सी..
एतना घौबरा गए,
ऐं, सोधे इमरजैंसिया में आ गए।
चौलिए,
हम डाक्टर हूं
पर एक कौबिता सुनिए।

मैंने कहा–
मैं तो फुंसी दिखाने आया हूं।

वे बोले–
हम भी त कौबिता में
ए ही न बताया हूं।
रोगी होगा पहला कौबी. . . .
इंटर में प्रसाद पंत न पढ़े थे,
ऊ सब हमरी जबान पर चढ़े थे।
त हम कहे हैं–
रोगी होगा पहला कौबी
आह से उपजी होगी गान,
फूटकर फोड़िया से चोपचाप
बहा होगा कौबिता औनजान।
मौजा आया?
हम अब्बी तौत्काल बनाया।
यू नो, औशोक जी!
फुंसी इज़ नाट ए मैटर ऑफ़ अर्जैंसी,
ए है हस्पताल का एमरजैंसी।
इधर सिरियस मरीज ही आते हैं,
जो चिखते, चिल्लाते
डौकराते हैं।

बुक्का फाड़-फाड़ रोते हैं
छोटा-मोटा केस त
रजिस्टर नहीं न होते हैं।
फुड़िया, फुंसी, मवाद
ख़ाज, खुजली, दाद
इसका ओ॰पी॰डी॰
आज हो चुका आलरैडी।
मंगल को होगा दुबारा,
टाइम नौ से बारा।
इंचार्ज हैं— डॉ॰ सरदाना,
उसकू दिखाना।
चाहें तो हमरा रैफ़रैंस देना,
हमरा नाम है—
डॉक्टर क्षीरसागर लाल बहादुर
प्रसाद सिंह सक्सेना।

अब सुनिए
मगलवार का फ़साना
मिल तो गए डॉ॰ सरदाना
लेकिन जैसे ही दिया
डॉ॰ सक्सेना का हवाला,
उनके नेत्रों से
बरसने लगी ज्वाला—
कौन सक्सेना?

नर्स बोली—
सीनियर डॉक्टर के आगे
जूनियर डॉक्टर का नाम
कब्बी नईं लेना।

डाक्टर ने फुसी के
आयतन और क्षेत्रफल टटोले,
और खुंदक में बोले–
मिर्ची ज़्यादा खाते हो?

– जी खाता हूं।

– ये चश्मा कितनी देर लगाते हो?

– जी सोते वक़्त भी लगाता हूं।
सपने साफ़ नज़र आते हैं।

– सिर में चक्कर आते हैं?

– जी अक्सर आते हैं।
जब–जब पढ़ता हूं
अपहरण की ख़बरें
निर्दोष लोगों के मरण की ख़बरे,
देखता हूं
भूख, बेरोज़गारी और
ग़रीबी के नज़ारे
और इस कमरतोड़ महंगाई के मारे
दर–दर ठोकर खाती
बिलखती ज़िंदगी,
हत्याएं, लूटपाट, दरिंदगी,
और इन सबके ऊपर
राजनीतिज्ञों की गंदगी,
डॉक्टर साहब,
चक्कर आते हैं,

खूब ज़ोर के चक्कर आते हैं।

डॉक्टर बोले
हूंह,
कभी आंखों के आगे
अंधेरा-सा होता है?

मैंने कहा–
होता है,
बिल्कुल होता है,
डॉ॰ सरदाना,
आपने ठीक पहचाना।
जब-जब देखता हूं
मज़हबी जुनून
सड़कों पर बहता हुआ
लाल-लाल ख़ून
हर तरफ़ सुलगती हुई
धर्म की आंच
उग्रवादी लोगों की
हिंसा का नाच
भारत को लपेटे हुए
आफ़तों का घेरा
आंखों के आगे
छा जाता है अंधेरा।

– अच्छा, पेट के कीड़े हैं?

– पेट का नहीं मालूम
पर दिमाग़ में तो हैं।

वे बोले
यही तो हम कहे
प्राब्लम दिमाग़ में है।
डरमौयड्सिस्ट इन्फ़ैक्टेड
मे जो डायबिटीज़ सलैक्टेड
फ़ौरन एक्सरे कराओ,
अच्छा,
ज़रा इधर दिखाओ।
सिर में बन सकता है ट्यूमर!

हमने कहा–
हक़ीक़त या ह्यूमर?

वे बोले–
ये तो नसीब हैं तुम्हारे।
टैस्ट कराने होंगे सारे
पहले एक्स रे, ब्लड, यूरीन
बेरियम मील
बायोप्सी के लिए फुंसी की कील
बाद में अल्ट्रासाउंड और कैटस्कैन,
हां, स्टूल टैस्ट भी होगा जैंटिलमैन!

हमने कहा–
स्टूल पर बैठे हैं
एक टैस्ट तो यहीं कर लीजिए!

वे नर्स से बोले–
इनकी तरफ़ ग़ौर कीजिए।
इन्हें स्टूल टैस्ट के लिए

जरूर बुलाएंगे
पहले अपने स्टूल में
छेद कराएंगे।
नर्स, इन्हें ले जाओ,
नैक्स्ट को बुलाओ।

तो नर्स हमें कोने में ले गई
प्यार से,
उसने सब कुछ समझा दिया
विस्तार से।
हम अहसानमंद हो गए
उधर टैस्ट वाले सारे विभाग
ग्यारह बजे ही बंद हो गए।

अगले दिन इधर से उधर भगे,
कितनी ही लाइनों में लगे।
एक टैस्ट यहां
तो दूसरा फ़ोर्थ फ़्लोर पर,
एक्सरे विभाग
अस्पताल के आख़िरी छोर पर।

लाइन लगाओ,
लाइन लगाओ
लाइन लगेगी।
एक्सरे नहीं होगा सिर्फ़ डेट मिलेगी।

चलिए डेट भी पाई
हफ़्ते भर बाद पहुंचे तो
मशीन ख़राब बताई।

अगला बार पता लगा
फिल्म खतम
अब क्या कर लेगे आप
क्या कर लेंगे हम!
लैब में पूछा--
रिपोर्ट कहां हैं?

उत्तर मिला–
यहां हैं,
पर तुमकू नईं मिल पाएंगी,
सीद्दा ओ॰ पी॰ डी॰ जाएगी।

ओ॰ पी॰ डी॰ कहती है--
रिपोर्ट आई नहीं!
लैब कहती है–
यहां से गई!!

चलो वापस ओ॰ पी॰ डी॰ जाएं
ओ॰ पी॰ डी॰ में क्लर्क बोला–
कितनी बार समझाएं?
रिपोर्ट यहां नहीं आई
नहीं आई बाबा,
मैंने तुम्हारा कोई कागज़ नहीं दाबा।

हमने कहा–
लैब तो कहती है. . .

– लैब तो कहती है. . . .
अरे लैब जो कहती है

आप उसी पर अड़ हे,
फिर लैब में जाइए
यहां क्यों खड़े हैं?

अगले मंगल को डॉ० सरदाना
कहने लगे—
न्यूरोलॉजी में जाना।
केस ट्रांसफ़र हो गया है तुम्हारा,
न्यूरो-सर्जन हैं डॉ० हज़ारा।
रिपोर्ट्स भी वहीं है।

डॉ० हज़ारा बोले—
अशोक जी
रिपोर्ट्स में कुछ नहीं है।
मज़े से वापस जाइए
और टी०वी० पर
अच्छे-अच्छे कार्यक्रम दिखाइए।
लेकिन बाय द वे
ये टैस्ट कहां कराए थे?

हमने कहा—
यूरीन स्टूल तो
यहीं अस्पताल लाए थे।

वे बोले—
ओह!
छोड़ दीजिए पैसों का मोह।
यहां की रिपोर्ट्स पर मुझे
कॉन्फ़ीडैंस नहीं है,

हमारी लैब के लिए
पानी यूरीन म
कोई डिफरैंस नही है।
ख़र्चा तो होगा,
लेकिन टैस्ट बाहर कराएंगे
तभी डायग्नोस होगा।
चलिए दूसरा रास्ता बताते हैं,
फुंसी की बायौप्सी कराते हैं।
इट्स अ बैटर वे ऑफ़ इन्वैस्टीगेशन,
तो फ़्राइडे को होगा
आपका ऑपरेशन।

फ़्राइडे को
छुट्टी पर चले गए डॉ॰ हज़ारा,
किसी और को ही करना था
ऑपरेशन हमारा।
नए डॉक्टर
हमें नहीं पहचानते थे,
हमें क्या,
निराला से नीरज तक
किसी को नहीं जानते थे।
हमने सोचा–
भले ही किसी को
नहीं जानते होंगे,
पर टी॰वी॰ देखते होंगे तो
हमें ज़रूर पहचानते होंगे।
पर क्या बताएं अपनी बदनसीबी,
जब पूछा–
सर आप देखते हैं टी॰वी॰?

उत्तर मिला
सिर्फ़ न्यूज़!

हम हो गए फ़्यूज।
बेकार हो गया 'क़हक़हे' में आना
बेकार गया मार्निंग ट्रांसमीशन चलाना।
अब काहे के कविसम्मेलन
काहे का संचालन
काहे की 'भोर-तरंग'
काहे की 'रंग-तरंग'
काहे का 'अपना उत्सव'
काहे का 'भारत महोत्सव'
व्यर्थ गए सबके सब,
ये हमारे फोड़े पर
चलाएंगे आरी,
फोड़े से पहले ही फूट गई
क़िस्मत हमारी।

रूह सकपकाई
तभी आवाज़ आई—
लोकल ऐनैस्थीसिया दें
या जनरल लगाएं?

अब भला हम कैसे बताएं—
ये तो आपकी प्रॉब्लम है!

वे बोले—
दरअसल, जनरल के लिए
ऑक्सीजन कम है।

चलो काम को आगे बढ़ाते हैं
आधा जनरल आधा लोकल लगाते है

हमने फोड़ा थामा,
अजीब है ड्रामा।
आधा जनरल, आधा लोकल
आधा मौन, आधा वोकल
आधा धुंधला, आधा फ़ोकल
आधा सुन्न, आधा सन्नाटा,
जैसे बिना आवाज़ का चांटा।

डॉक्टर नया है
हम भांप रहे थे,
क्योंकि हाथ में औज़ार कांप रहे थे।
आत्मा हो गई अधीरा
लगने ही वाला था चीरा
कि अचानक
भाग्य खुल गए हमारे,
ऑपरेशन थिएटर में
एक प्रोफ़ेसर पधारे।
सौम्य मुख,
ममतामयी शांत छवि,
खुश हो गया कवि।
दुग्ध-धवल वस्त्रों में
गोया करुणा का, दया का
साक्षात् पुतला हो,
ये चीरा लगाएं
तो कितना भला हो।
फोड़े पर उन्होंने

स्नेह से हाथ फेरा
लगा जैसे छंट गया अंधेरा।
पहने दस्ताने,
तो हम लगे हर्षाने।
अब कुछ नहीं होगा नाजायज़,
तभी वे ज़ोर से बोले–
        कमॉन बॉयज़!

आंखें खोलते ही
बढ़ गई टीस,
क्योंकि अगले ही क्षण
पलंग के चारों ओर
कम से कम बीस
मैडीकल छात्र थे,
हम उनके प्रयोगों के
इकलौते पात्र थे।

प्रोफ़ेसर बोले–
        लिसिन डीयर!
        एक्सरे इज़ नॉट वैरी क्लीयर।
        तुमको पता लगाना है
        और बारी-बारी से बताना है–
        कि फोड़े में क्या है?
        केस बिलकुल नया है।

किसी ने सहला कर देखा
किसी ने टटोल कर,
किसी ने मसक कर देखा
किसी ने तोल कर।

सबक सब फोडे का
तरह तरह से दबाए
अपना हालत
हम कैसे बताएं!
खोपड़ी में बज रहे थे
पीड़ा के नगाड़े,
हम अंदर ही अंदर दहाड़े।
पर वाह रे आधा लोकल
आधा जनरल ऐनैस्थीसिया,
किसी ने अंदर की दहाड़ पर
ध्यान ही नहीं दिया।
दर्द हम सह नहीं पा रहे थे,
पर मज़ा ये कि
कुछ कह नहीं पा रहे थे।

एक बोला–
सर, इसमें पानी है।
दूसरा बोला–
पस है।
तीसरा बोला–
कैंसर है।
चौथा बोला–
टिटनस है।

प्रोफ़ेसर बोले–
फ़ालतू की बहस है।
ये क्या है,
ये जानने के लिए हम
थोड़ा वेट करेंगे,

कमान
इसे ऑपरेट करेंगे।
ए बॉय, तुम्हारा ध्यान किधर है?

सहमते हुए लड़का बोला--
सर,
ये आदमी अशोक चक्रधर है।
कविताएं सुनाता है,
टी॰वी॰ पर आता है।

प्रोफ़ेसर ने लगाई डांट–
सो व्हाट, सो व्हाट।
क्या फ़र्क़ पड़ता है कि
ये आदमी है, कवि है
मेंढक है या कीड़ा-मकोड़ा है,
हमारे लिए तो सिर्फ़ एक फोड़ा है।

अब पता नहीं
किसने औज़ारों की ट्राली खैंची,
किसने चलाई कैंची।
किसने फेरा चाकू
एक अकेली जान
और इतने हलाकू।
कहां हो डॉ॰ हज़ारा
इन कसाइयों ने मारा।

प्रोफ़ेसर कह रहे थे–
जो भी रिपोर्ट जल्दी लाएगा,
स्पेशल मार्क्स पाएगा।

स्टिचिंग कर देना

कहकर चले गए,
हमने सोचा- भले गए।
चलो पीड़ाओं का अंत हुआ,
लेकिन सिलसिला अनंत हुआ।

एक छात्र बोला—
स्टिच कर दे,
दूसरा बोला—
गॉज भर दे,
तीसरा बोला—
मैं क्यों भरूं तू भर,
चौथा बोला—
जा साले मर !
पांचवा बोला—
आई कांट वेट,
छठा बोला—
मेरी है कन्या के साथ डेट।
सातवां बोला—
मुझे तो नहाना है,
आठवां बोला—
मुझे पिक्चर जाना है।
नवां बोला—
साले, बहाना बनाता है,
दसवां बोला—
बाई गॉड
मुझे स्टिच करना ही
नहीं आता है।

छटपटाए और बडबडाए
हाय कविता कविता
कविताए निकल गई,
ढक्कन तो लगा दो!

एक नर्स दूसरी से बोली–
इसे होश आ गया है
जगा दो।
लेकिन कविता कविता
क्या बोलता है रोगी?

दूसरी हंसी–
इसकी गर्ल फ़्रैंड होगी. . . .
ए मैन! उट्ठो
यहां दूसरा पेशैंट आइंगा,
तुमारा सात कौन है
कइसे जाइंगा?

हमने कहा–
घाव तो भर दो!

पहली बोली–
नहीं, छुट्टी कर दो।

दूसरी समझाए–
इतना बरा डॉक्टर
उसने तुमारा फोरा
अगर खुला छोरा
तो भाई, इसमें भलाई!

उट्ठो उट्ठो

सहारा देकर ज़बर्दस्ती उठाया,
और बाहर का रास्ता दिखाया।
बाहर आकर रह नहीं पाए खड़े
कटे पेड़ की तरह गिर पड़े।
ओ3म् भूर्भुवः स्वाहा. . . .
हम जिस पर गिरे,
अब वो कराहा—
तुमसे पहले यहां डाला गया हूं,
रिकवरी रूम से निकाला गया हूं।

मंगल का दिन बड़ा अमंगल था,
हर तरफ़ कराहों का जंगल था।
लॉन में मरीज़ ही मरीज़ थे,
हम भी अज़ीब चीज़ थे।
जहां बैठे, वहीं पर लेटी थी एक लाश,
साथ में एक आदमी था हताश।
पूछा—
ये मर गया,
तुम रो नहीं रहे?

उत्तर मिला—
कोई क्या कहे!
हमारे सारे आंसू
ख़त्म हो चुके हैं,
अस्पताल की हालत पर
हम पहले ही
बहुत रो चुके हैं।

अचानक घटिया सी बजी
मुर्दे के शरीर में
संस्कृत सुनाई पड़ा
उसकी तक़रीर में –
अस्पतालं अति विशालं विचित्र हालं पायेभ्य हम
लंब क्यूयं, दृश्य न्यूयं, अभिमन्यूयं बनायेभ्य हम
धक्कमुक्कं, हक्कबक्कं, सर्वदुक्खं पायेभ्य हम
अस्पतालं, अतिमलालं, अंतकालं पछतायेभ्य हम
ओ3म् नमो नमः।
मैं मरा भी कहा।

इतना कहकर मुर्दा मौन हो गया,
स्वर्ग में गो वैंट गौन हो गया।
तभी पता लगा
मुआइने के लिए मंत्री जी आ रहे हैं,
ज़िंदे-मुर्दे सब हटाए जा रहे हैं।
हम भी लड़खड़ाते हुए भगे,
एक डिस्पैंसरी पर जाकर लगे।
निवेदन किया–
भैया अहसान कर दो,
भयंकर पीड़ा है
घाव तो भर दो।

कंपाउंडर झल्लाया–
तुम जैसे लोग तो
बेमौत मरते हैं,
मुफ़्त में
अस्पताल को बदनाम करते हैं।
पहले नहीं दिखाते हैं,

हालत जब बिल्कुल बिगड़ जाती है
तब आते हैं।
जाओ जाओ।
कहीं और दिखाओ।

दर्द के मारे
अटकी हुई जान थी,
पास में ही दवाइयों की दुकान थी।
दर्द की एक गोली ख़रीदी,
आंखें होने लगीं उनींदी।
खोपड़ी में चक्कर आएं,
मन हुआ यहीं पर पसर जाएं।
पर लेटने का कहां ठिकाना था,
मंत्री जी को भी
आज ही आना था।

अचानक
एक वार्ड-बॉय आया
कान में फुसफुसाया--
लेटोगे?

हमने कहा–
लेटेंगे?

बोला–
दस रुपए घंटे लगेंगे।

हमने कहा–
देंगे

फिर पता नहीं किसे पटककर
वो एक स्ट्रेचर लाया,
हमें गाड़ी पर चढ़ाया।
नाक में रुई लगाई,
ऊपर से सफ़ेद चादर उढ़ाई।
इधर-उधर देखा मौक़ा,
और गाड़ी को सीधे
मुर्दाघर रोका।

अंदर जाकर
एक ड्रॉर खोला
और बोला—
आराम से लेट जाओ
मुर्दाघर एअरकंडीशंड है,
देखो यहां कैसी प्यारी-प्यारी ठंड है!
यहां हर दड़बे में
एक-एक डैड-बॉडी बंद है,
डिस्टरबैंस नईं,
आनंद-ही-आनंद है।

यहां बड़ी राहत मिली
बाहर तो आफ़त मिली।
कैसी तरावट, कैसी शांति
कितना सुकून है,
दर्द भी थोड़ा न्यून है।
तभी बगल में कोई कराहा,
उठकर देखना चाहा।
घिग्घी बंध गई—
क्या मुर्दे बोल रहे हैं?

उत्तर मिला
हम दड़बा खोल रहे है।

हमने पूछा--
ज़िंदा हैं या मुरदा!
और अगर ज़िंदा हैं
तो यहां किसलिए हैं?

उत्तर मिला--
हमने भी दस रुपए घंटे दिए हैं।

तभी डॉक्टर क्षीरसागर लाल बहादुर प्रसाद सिंह सक्सेना
मुर्दाघर में घुसे,
क्रोट उतारा, अंगड़ाई ली
और हौले-हौले हंसे।
एक ड्रॉर खोली और सो गए,
देखकर हम धन्य हो गए--
वाह रे अस्पताल तुझे नमन है
तू तो चैन का चमन है।
मौत को गुलिस्तान है,
सर्वश्रेष्ठ स्थान है,
और हमारा देश
सचमुच महान है,
जहां मुर्दे तो चैन से
एअरकंडीशंड रूम में सो रहे हैं
और करोड़ों लोग
अपनी ज़िंदगी
सलीब की तरह ढो रहे हैं।

दाना-तिनका

अगर
घोंसला ना बन पाए
मिले न दाना-तिनका
दिन में बोले
रात का पक्षी
रात में बोले
दिन का।

समंदर की उम्र

लहर ने
समंदर से
उसकी उम्र पूछी,
समंदर
मुस्कुरा दिया।

लेकिन जब
बूंद ने
लहर से
उसकी उम्र पूछी
तो
लहर बिगड़ गई
कुढ़ गई
बूंद के
ऊपर ही
चढ़ गई. . . और. . .
इस तरह
लहर मर गई!

बूंद समंदर में समा गई
और. . .
समंदर की उम्र
बढ़ा गई!

हसना-रोना

जो रोया
सो आंसुओं के
दलदल में
धंस गया,
और कहते हैं
जो हंस गया
वो फंस गया।

अगर फंस गया,
तो मुहावरा
आगे बढ़ता है
कि जो हंस गया,
उसका घर बस गया।

मुहावरा फिर आगे बढ़ता है
जिसका घर बस गया,
वो फंस गया!

......और जो फंस गया,
वो फिर से
आसुंओं के दलदल में
धंस गया!!

हसो और मर जाओ

ये हंसी भी चीज़ करामाती है,
आती है तो आती है
नहीं आती है तो
नहीं आती है।
आप कोशिश करते रहिए
हंसाने की,
नहीं आएगी,
और जब आएगी
तो बिना बात की बात पर
आ जाएगी।

एक साहब
जो हर किसी को
हंसाने का
दम भर रहे थे,
एक बार
एक गैंडे को
गुलगुली कर रहे थे।
बहुत प्रयास किया,
लेकिन गैंडा
मुस्कुरा के भी नहीं दिया।
हाथ-भर गुलगुली पर
एक इंच नहीं हंसा,
तो सामने वाले ने
ताना कसा—
बड़ा दम भरते थे

बड़ी ताल ठोकते थे
बड़ा अहंकार दिखाया,
पर गैंडा तो
ज़रा भी नहीं मुस्कुराया।

तो साब,
जैसे-तैसे
उन्होंने झेंप मिटाई, बोले-
खाल नेताओं की तरह
मोटी है न भाई!

और हैरत की बात ये
कि इस बात पर
गैंडा मुस्कुरा दिया,
हमने कहा-
मियां!
ये हंसी भी
चीज़ करामाती है,
आती है तो आती है,
नहीं आती है
तो नहीं आती है।

और जब आती है
तो धुंआधार आती है
रोके नहीं रुक पाती है,
दबाने की हर कोशिश
नाकाम हो जाती है।
होंठ भले ही सी लो
पर चेहरे पर

आखो मे, अदाओ मे
झिलमिलाती है।

गाल गुलेल हो जाते हैं,
सारे ब्रेक फेल हो जाते हैं।
ये हंसी अपना शिकंजा
कुछ इस तरह कसती है,
कि मुंह-दांत भींच लो
तो तोंद हंसती है।
देखा है कभी
किसी तोंद का हंसना?
जैसे फ़ैट्स के दरिया में
कैट्स का उछलना!

कहते हैं—
जानवर और इंसान में
अंतर यही है,
कि आदमी के पास हंसी है
जानवर के पास नहीं है।
और इसलिए
मेरा ये पुख़्ता बयान है,
कि जो नहीं हंसता
वो जानवर-समान है।
दोस्तो,
दरअसल ये हंसी बहुआयामी है,
जिगर, फेंफड़े, आंत, यकृत, तिल्ली,
गुर्दे, पसली, पेट की झिल्ली,
इन सबके लिए व्यायामी है।
जो अट्ठहास करते हैं

उनके तो हाथ पैर
पेट, पाचन-तंत्र
सबकी मशक़्क़त हो जाती है,
जो मनहूस हैं
उन्हें कब्ज़ की
दिक़्क़त हो जाती है।
पर सवाल तो यही है
कि कम्बख़्त आती है तो आती है
नहीं आती है तो नहीं आती है।

यों कभी-कभी
हंसी भी आती है अकेले में,
ये हंसी कुछ ऐसी होती है
जैसे मसाला छिपा रहता है
करेले में।
एक बार ब्रह्मा जी
अपने ऑफ़िस में
अकेले बैठे
ढूंढ रहे थे लेखनी,
क्योंकि
अशोक चक्रधर की फ़ाइल बंद करके
सुरेन्द्र जी की थी देखनी।
बहुत ढूंढी, बहुत ढूंढी, नहीं मिली,
पर अचानक उस एकांत में
ब्रह्मा जी की बत्तीसी खिली,
क्योंकि लेखनी लगी थी
उनके कान पर,
और हम यह सोचकर
बलिहारी हैं

ब्रह्मा जी की मुस्कान पर
कि हंसी आती है
अपनी भूल पर,
हसी ब्याज पर आती है
न कि मूल पर।
इसलिए वो हंसी अच्छी
जो अपने पर आए
वो हंसी अधम
जो किसी को सताए।

लोग अक्सर हंसते हैं
कि सामने वाला शख़्स
ऐंचकताना है,
लूला है, लंगड़ा है, काना है।
अगर उसकी जगह तुम होते
तो सोचो
कि हंसते या रोते!
कमज़ोर पर हंसने में
कोई धाक नहीं है,
मित्रो,
मजाक करना
कोई मज़ाक नहीं है।

अच्छा,
कभी-कभी उस हंसी पर
हसी आती है
जो हंसी आती है देर से,
कभी-कभी हंसी आती है
शब्दों की उलटफेर से।

इस चराचर में
चौरी-चौरा के चौबारे में
चारा-चोरी पर इसलिए हंसो
क्योंकि हंसने के अलावा
कोई चारा नहीं है,
देखो, फंसने वाला भी
हंस रहा है
क्योंकि वो बेचारा नहीं है।
फंसा शायद इसलिए
कि चारा सबके लिए
बराबर नहीं था,
शेयर घोटाले पर
इसलिए हंसो
क्योंकि घोटाले में
शेयर बराबर नहीं था।

हमारे एक मित्र
सीढ़ियों से फिसल गए,
वर्णन करने लगे तो
ऊटपटांग शब्द
उनके मुंह से निकल गए।
बोले- कल रात हम
छत पर भले गए,
फिसली से ऐसे सीढ़े
कि सीढ़ते ही चले गए
सीढ़ते ही चले गए।

नवजात बच्चों की हंसी
मां की घुट्टी में है,

बडे बच्चों की हंसी
स्कूल की छुट्टी में है,
और हमारे नेताओं की हंसी
सी बी आई की मुट्ठी में है।

ये हंसी एक चमत्कार है
चेहरे के भूगोल में
होठों का विभिन्न-कोणीय प्रसार है।
पिताजी हंसें तो फटकार है
मा हंसे तो पुचकार है
बीवी हंसे तो पुरस्कार है
पति हंसे तो बेकार है
उधार देने वाला हंसे तो इंकार है
लेने वाला हंसे तो उसकी हार है
दुश्मन हंसे तो कटार है
पागल हंसे तो विकार है
विलेन हंसे तो हाहाकार है
पड़ोसी हंसे तो प्रहार है
दुकानदार हंसे तो भार है
हीरो हंसे तो झंकार है
हीरोइन हंसे तो बहार है
प्रेमिका हंसे तो इज़हार है
प्रेमी हंसे तो फुहार है
ओ हंसी
'तू धन्य है, तुझे धिक्कार है' !
क्योंकि जहां नहीं आनी चाहिए
वहां आने में देर नहीं लगाती है,
एक पल में महाभारत कराती है।
हसी चीज़ करामाती है,

आती ह तो आती है
नहीं आती है तो नहीं आती है।

ऐसी हालत में
कभी मत हंसना
जब सामने वाले के पास छिलका
और तुम्हारे पास
केवल संतरा हो,
मत हंसना जब
पागल के हाथ में छुरा हो।
कभी मत हंसना
जब नाई के हाथ में उस्तरा हो।

मत हंसना
जब डॉक्टर को
बिना चश्मा
देखने में बाधा हो,
और तुम्हारे शरीर में
उसका इंजैक्शन आधा हो।
मत हंसना
जब पोलिंग बूथ पर
बुर्क़े में आदमी
लगा रहा ठप्पा हो,
या तब जब
कन्या के छोटे-से मुंह में
बड़ा-सा गोलगप्पा हो।

हंसी एक छूत का रोग है,
हंसी एक सामूहिक भोग है।

तुम हंसोगे
तो तुम्हारे साथ हंसेगा
पूरा ज़माना,
रोओगे
तो अकेले में पड़ेगा
आंसू बहाना।

सबसे अच्छी हंसी वो
जो अपने पर
दूसरों को हंसाए,
वो हंसी क्या
जो निर्बल का
कलेजा जलाए।

मजा तो तब है जब
आंसुओं की कहानी भी
हंसी में कह जाओगे,
वरना हंसी के बिना
ज़िन्दगी में ज़िन्दगी को
ढूंढते रह जाओगे!

अपने ऊपर इसलिए हंसो
कि तुमने दुनिया को नहीं समझा,
दुनिया पर इसलिए हंसो
कि दुनिया ने
तुम्हें नहीं समझा।

अपनी भूलों पर इसलिए हंसो
कि सुधार नामुमकिन है,

अपनी कामनाओं पर
इसलिए हंसो
कि पूरी नहीं होंगी।

मोहियों पर इसलिए हंसो
कि मोह झूठा है.
द्रोहियों पर इसलिए हंसो
कि द्रोह झूठा है।

करुणा, वात्सल्य, शृंगार, अंगार
वीभत्स, भयानक, अद्‌भुत, अचानक
सारे मनोभावों में
भ्रांति ही भ्रांति है,
एक केवल हास्य है
जिसमें विश्वशांति है।

हंसो तो सच्चों जैसी हंसी,
हंसो तो बच्चों जैसी हंसी।
इतना हंसो कि तर जाओ
हंसो और मर जाओ।

हंसी एक फटे-दिल के लिए
मुहब्बत की पाती है,
पर समस्या यही है कि
कम्बख़्त
आती है तो आती है,
नहीं आती है
तो नहीं आती है।

फूलों से शर्मिंदा

क्या बतलाऊं
सुविधाओं में
कैसे-कैसे
जिंदा हूं,
गुलदस्ते में
फूल सजाकर
फूलों से
शर्मिंदा हूं।

कोठी भी है
गाड़ी भी है
रोटी भी है
मक्खन भी,
किस मुंह से
कहता हूं सबसे
मुफलिस का
कारिंदा हूं।

खुश होते हैं
जब मिलते हैं
कौली भी
भर लेते हैं,
मुड़ते ही जो
आय लबों पे
मै अपनी ही
निंदा हूं।

दो सारस
कछुए को लेकर
नभ में
उड़ने वाले थे,
एक नहीं राज़ी
मैं सहमत
दूजा
मूक परिंदा हूं।

इस माथे पर
शिकनें लाखों
कुछ अपनी
कुछ दुनिया की,
जिसके दोनों ओर
नदी हों
उस तट का
बाशिंदा हूं।

उलझन तो
शायर को
बहुत थी
कैसे मुक़म्मल
हो ये ग़ज़ल,
जिसको वो
न निकाल सका
मैं ऐसा शेर
चुनिंदा हूं।

ये मत करना
वो मत करना
आहत हुआ
नसीहत से,
भूतकाल के
आईने में
खडा हुआ
आइंदा हूं।

क्या बतलाऊं
सुविधाओं में
कैसे-कैसे
जिंदा हूं?

लहर डालियां नाचीं क्यों

तट ने
तुम्हें नहीं बुलाया
लहरो!
कुलांचती क्यों हो?

पवन ने
कोई गीत नहीं गाया
डालियो!
नाचती क्यों हो?

दोनों
और भी झूमने लगीं
हर्ष से,
मिलकर बोलीं–
स्पर्श से!

बड़ा ख़याल

कभी रूपक
कभी दीपचंदी
कभी दादरा
कभी कहरवा. . .

बच्चों की
बॉल की
हर उछाल में
हर बार
नई ताल है।

आलाप तो लेती है
दरवाज़े पर मां
जिसके अंदर
बडा ख़याल है।

सद्भावना गीत

गूंजे गगन में,
महके पवन में,
हर एक मन में
— सद्भावना।

मौसम की बाहें,
दिशा और राहें,
सब हमसे चाहें,
— सद्भावना।

घर की हिफ़ाज़त,
पड़ोसी की चाहत,
हरेक दिल को राहत,
— तभी तो मिले,

हटे सब अंधेरा,
ये कुहरा घनेरा,
समुज्ज्वल सवेरा,
— तभी तो मिले।

जब हर हृदय में,
पराजय-विजय में,
सद्भाव लय में,
— हो साधना।

गूंजे गगन में,
महके पवन में,
हर एक मन में
— सद्भावना।

समय की रवानी,
फ़तह की कहानी,
धरा स्वाभिमानी,
— जवानी से है।

गरिमा का पानी,
ये गौरव निशानी,
सुखी ज़िंदगानी,
— जवानी से है।

मधुर बोल बोले,
युवामन की हो ले,
मिलन द्वार खोले,
—संभावना।

गूंजे गगन में,
महके पवन में,
हर एक मन में
— सद्भावना।

हमें जिसने बख़्शा,
भविष्यत् का नक्शा,
समय को सुरक्षा,
— उसी से मिली।

ज़रा कम न होती,
कभी जो न सोती,
दिए की ये जोती,
— उसी से मिली।

नफ़रत थमेगी,
मुहब्बत रमेगी,
ये धरती बनेगी,
— दिव्यांगना।

गूंजे गगन में,
महके पवन में,
हर एक मन में
— सद्भावना।

मौसम की बाहें,
दिशा और राहें,
सब हमसे चाहें,
— सद्भावना।

चिड़िया की उड़ान

चिड़िया तू जो मगन, धरा मगन, गगन मगन,
फैला ले पंख ज़रा, उड़ तो सही, बोली पवन।
अब जब हौसले से, घोंसले से आई निकल,
चल बड़ी दूर, बहुत दूर, जहां तेरे सजन।

वृक्ष की डाल दिखें
जंगल-ताल दिखें
खेतों में झूम रही
धान की बाल दिखें
गाव-देहात दिखें, रात दिखे, प्रात दिखे,
खुल कर घूम यहां, यहां नहीं घर की घुटन।
चिड़िया तू जो मगन..........।

राह से राह जुड़ी
पहली ही बार उड़ी
भूल गई गैल-गली
जाने किस ओर मुड़ी
मुड गई जाने किधर, गई जिधर, देखा उधर,
देखा वहां खोल नयन, सुमन-सुमन, खिलता चमन।
चिड़िया तू जो मगन..........।

कोई पहचान नहीं
पथ का गुमान नहीं
मील के नहीं पत्थर
पांव के निशान नहीं

ना कोई चिंता फ़िकर, डगर डगर, जगर मगर,
पंख ले जाएं उसे बिना किए कोई जतन।

चिड़िया तू जो मगन, धरा मगन, गगन मगन,
फैला ले पंख ज़रा, उड़ तो सही, बोली पवन।
अब जब हौसले से, घोंसले से आई निकल,
चल बड़ी दूर, बहुत दूर, जहां तेरे सजन।

राम राम राम!

सृष्टि का परमपिता है एक
नाम रख डाले किंतु अनेक
वही है राम, वही अल्लाह
वही है खुदा, वही है गॉड
वही है कृष्ण, वही क्राइस्ट
बनाया अपना अपना इष्ट
सभी ने दिया प्रेम-संदेश
मगर क्यों झुलस रहा यह देश
न जाने क्या होगा अंजाम?
धर्म के नाम, ये क़त्लेआम!
राम राम राम!

धुआं ही धुआं, लपट ये चीख़
जिंदगी मांग रही है भीख
नाचते चाकू छुरे कृपान
मुडे हैं उधर, जिधर इंसान
घृणा की आग, हवस का शोर
सुनाई देता है हर ओर
खुदा के बंदो, मनु-संतान
अगर प्यारा है हिंदुस्तान
लगाओ इस पर शीघ्र विराम।
धर्म के नाम, ये क़त्लेआम!
राम राम राम!

जिन्होंने किए हृदय वीरान
छीन ली अधरों से मुस्कान

किया है वातावरण ख़राब
पी रहे हैं जो लहू-शराब
नहीं आती है जिनको शर्म
नहीं है उनका कोई धर्म
करी मानवता लहूलुहान
नहीं वे क़तई नहीं इंसान
करें उनकी कोशिश नाक़ाम।
धर्म के नाम, ये क़त्लेआम!
राम राम राम!

कहो आदम का मनु का वंश
सभी में एक ईश का अंश
सभी में एक खुदा का नूर
सभी इंसान, सभी भरपूर
करें मानव से मानव प्यार
बने यह धरती इक परिवार
यही प्रत्येक धर्म का मर्म
यही कहता है हिंदू धर्म
यही तो कहता है इस्लाम।
धर्म के नाम, ये क़त्लेआम!
राम राम राम!

डबवाली शिशुओं के नाम

आरजू, बंसी – एक साल!
निशा, अमनदीप, गुड्डी – दो साल!
मीरा, एकता, मरियम – तीन साल!
रेशमा, भावना, नवनीत – चार साल!
गोलू, गिरधर, बॉबी – पांच साल!
अवनीत कौर, हुमायूं – छः साल!
राखी, विक्टर, सुचित्रा – सात साल!
अकित, दीपक, रेहाना – आठ साल!
नौ साल के हीबा और विवेक!
और भी
अनकानेक.....

डबवाली के बच्चो!
सूम समय के सामने
सभी सवाली हैं,
डबवाली की आंखें
डब डब वाली हैं।

अखबार में मैंने पढ़ी
पूरी मृतक सूची,
अतरात्मा कांप गई समूची।
अस्तित्व अग्नि में समो गया,
तीन मिनट में तो
सब कुछ हो गया।
बसत आने से पहले
बस अंत आ गया,

क़ापलो पर कयामत का
पतझर क़हर ढा गया।
आसमान से आग बरसी
और तुम
आसमान में चले गए,
हम अपनी ही भूलों से छले गए।

वापस लौट आओ बच्चो!
सच्चे दिल से पुकारता हूं
वापस लौट आओ बच्चो!
पूरे दिन
उपवास किए लेता हूं,
चलो पुनर्जन्म में
विश्वास किए लेता हूं।

तो लौटो
आज की रात से पहले,
लेकिन एक शर्त है कि
कोख बदले।
बात को समझना कि
कही है किस संदर्भ में,
मसलन हुमायूं लौट आए,
लेकिन किसी हिंदू मां के गर्भ में।

हुमायूं! जब तू
मुस्लिम चेतना के साथ
किसी हिंदू घर में पलेगा,
तब तुझे
क़ुरानख़ानी और अज़ान का स्वर

नही खलेगा।
तू एक ओर
अपने सनातन धर्म को
आदर देगा,
तो साथ में
पीरो को भी चादर देगा।

प्यारी रेहाना!
तू किसी सिख मां की
कोख में आना।
गुरु ग्रंथ साहब तुझे
नई रोशनी देंगे,
कि हम सब जिएंगे
न कि लड़ेंगे मरेंगे।

बसी, दीपक, सुचित्रा, भावना!
तुम ईसाई या मुस्लिम माताएं तलाशना।
ताकि वहां हिंदू चेतना के
दीपक का उजाला हो,
बसी की तान पर
तस्बीह की माला हो।
भावना हो कुल मिलाकर प्यार की,
इसीलिए मैंने तुम सबसे गुहार की।
ओ विक्टर, विक्की, हीबा, हुमायूं
अवनीत, नवनीत, रेहाना, राखी और
एकता कौर!
नए घर में आकर
भले ही मत्था टेकना
बपतिस्मा कराना, जनेऊ धारना

या तुम्हारा अक़ीका हो, सुन्नत हो,
पर दूसरे धर्मों के लिए
आदर लेकर जन्मना
ताकि भारत एक जन्नत हो।

अजन्मे शिशुओ!
तब तुम बड़े होकर
लाशें नहीं पाटोगे,
हर हर महादेव
अल्ला हो अकबर
सत सिरी अकाल
बोले सो निहाल . . .
ऐसे या इन जैसे नारों में
बस इंसानियत ही तलाशोगे।

भारत भूमि पर आने वाले
अजन्मे शिशुओ!
भ्रूण बनने से पहले
थोड़ी-सी अक़्ल लो,
जहां भी हो
मौक़ा पाते ही निकल लो।
पुनर्जन्म के संदर्भ बदल लो,
धर्मों से धर्मों के
मर्मों को जोड़ना है
इस नाते
फ़ौरन गर्भ बदल लो।

परदे हटा के देखो

य घर है दर्द का घर, परदे हटा के देखो,
गम हैं हंसी के अंदर, परदे हटा के देखो।

लहरों के झाग ही तो, परदे बने हुए हैं,
गहरा बहुत समंदर, परदे हटा के देखो।

चिड़ियों का चहचहाना, पत्तों का सरसराना,
सुनने की चीज़ हैं पर, परदे हटा के देखो।

नभ में उषा की रंगत, सूरज का मुस्कुराना
ये खुशगवार मंज़र, परदे हटा के देखो।

अपराध और सियासत का इस भरी सभा में,
होता हुआ स्वयंवर, परदे हटा के देखो।

इस ओर है धुआं सा, उस ओर है कुहासा,
किरणों की डोर बनकर, परदे हटा के देखो।

ऐ चक्रधर ये माना, हैं खामियां सभी में,
कुछ तो मिलेगा बेहतर, परदे हटा के देखो।

गति का कुसूर

क्या होता है कार में
पास की चीज़ें
पीछे दौड़ जाती हैं
तेज़ रफ़्तार में!

और ये शायद
गति का ही कुसूर है,
कि वही चीज़
देर तक
साथ रहती है
जो जितनी दूर है।

बग्गा का मग्गा

बाबू बांके बिहारी बग्गा,
बाल्टी से
डाल नहीं पाते हैं
ठंडे पानी का
पहला मग्गा।

नहाना तपस्या है,
विकट समस्या है।
अजीब टंटा!
नहाने में लगाते हैं
पूरा एक घंटा।

घनाकार
स्नानागार।
शाश्वत परम्परानुसार–
श्रमजन्य पसीनायित
धुलने को लालायित
वस्त्रों को
क्रमशः उतारते हैं,
धुंधले शीशे के समक्ष
शीश और वक्ष
निहारते हैं।
दर्पण छोटा क्यों लगवाया
स्वयं को धिक्कारते हैं।

बिना बात खंखारते हैं,

फिर बाल्टी सरकाकर
आदिम स्वरूप में
पटले पर पधारते हैं,
मग्गा उठाते हुए
नहाने का
पुनर्संकल्प धारते हैं।

लेकिन
बाबू बांके बिहारी बग्गा,
डाल नहीं पाते हैं
ठंडे पानी का
पहला मग्गा।

आर्किमिडीज़ के सिद्धांत की
पुष्टि के लिए
बाल्टी के
लबालब जल में
पहले आधा
फिर तनिक ज़्यादा
मग्गा डुबाते हैं,
उतना ही पानी
बाहर गिरता हुआ पाते हैं।
संतोष होता है
कि आर्किमिडीज़ ठीक था
लेकिन वर्तमान में
कन्याओं का
मिडीज़ पहनना ग़लत है।
लडकों में
जो नशाख़ोरी की लत है

वो भी ग़लत है।
बॉस के मन में
ख़ास उन्हें लेकर
जो ग़फ़लत है
सो भी ग़लत है।

अब किसे कोसें
कोई बात नहीं सूझती है,
अचानक बाथरूम में
लोकसभा स्पीकर
पी० ए० संगमा की
आवाज़ गूंजती है—
अटैंशन!
बिहेव योरसैल्फ़!
ध्यान रखिए
पूरा देश आपको देख रहा है।

'पूरा देश आपको देख रहा है!'
बग्गा स्वयं को
घुटनों में घबरा कर समेटते हैं।

'पूरा देश आपको देख रहा है!'
हड़बड़ाकर तौलिया लपेटते हैं।

'पूरा देश आपको देख रहा है!'
लज्जावश
पैर के अंगूठे से
फ़र्श का पलस्तर
खरोंचते हैं।

पूरा देश आपको देख रहा है!'
एकाएक सोचते हैं—
यह तो उन्होंने
ससद में सांसदों से कहा,
बग्गा तू क्यों घबराया
यार तू तो नहा।

जरा सोच
सासदों को
संसद में
सरेआम
शर्मोहया उतार फेंकना
नही कसकता,
तू अपने ही बाथरूम में
तौलिया भी
नही उतार सकता?

लानत है!
तेरा शरीर तो
तेरी अमानत है।
बैठ जा
और चैन से नहा,
ख़बरदार संगमा जी
जो बाथरूम में मुझसे कुछ कहा!

फिर बाल्टी में
डुबाते हैं तर्जनी,
नख-शिख तक कौंधती है
सिहरन की सनसनी।

सोचते हे
ऐसी सिहरन तो........
तब हुई थी
जब
एक औरत जली थी
तंदूर में,
ऐसी सिहरन तो
तब हुई थी
जब
जमराज बर्फ़ जीम गई
जनों को
अमरनाथ यात्रा सुदूर में।

ऐसी सिहरन
तब होती है
जब रेलगाड़ी में
डाकुओं से जूझता
इंस्पैक्टर अभय कुमार
मारा जाता है,
ऐसी सिहरन
तब होती है
जब तीन छोटी बेटियों का
सहारा जाता है।
ऐसी सिहरन तो
तब होती है
जब मौत
मर्सीलैस मैसेज
पेज कर देती है,
ऐसी सिहरन तो

तब होती है
जब ब्लू लाइन
लाइफ़ लाइन को ही
इरेज कर देती है।

ऐसी सिहरन तो
तब होती है
जब हत्या आत्महत्या के
हादसे होते हैं,
पर हंसी आती है
जब रिश्तेदार रोते हैं।
..चलो छोड़ो
हमे क्या
हम तो
पहले पैर धोते हैं।

मग्गा
झुककर
जब नीर के करों से
बग्गा जी के पैर छूता है
तो शरीर में व्यापती है
एक फुरफुरी,
जैसे गांव के झुरमुट से
झांकती झुनिया की
झलक की झुरझुरी।
जैसे
आम के बग़ीचे के पीछे
सरसों के खेत के
गलीचे में

मास्साब की
नीम की संटी,
शीतल नीर
कुछ ऐसा ही करंटी।

अब नीम की
दातुन कहां?
पेस्टों और ब्रशों के
असुरक्षा चक्र हैं,
ऋषियों मुनियों द्वारा अप्रूव्ड
हल्दी चन्दन के
मैजिक फ़ौर्मूलों के
होजा तरोताज़ा
विज्ञापन वशीकरण वक्र हैं।
मुख की दुर्गन्ध
दूर करने की मदिराएं
शुद्ध गंगाजल से बने साबुन
बाथरूम में ही सैटेलाइट मार्केट है
सैल्यूलर फ़ोन हैं,
जरासीमों की रक्षा करने वाले
आफ़्टरशेव कोलोन हैं।
चर्म भले ही नर्म न हो
पर दिमाग़ गर्म पाते हैं
मिस्टर बग्गा,
बेचारी बाल्टी
मायूस मग्गा।

अब वे साहसपूर्वक
मग्गे को

पुनर्पुनर्जलमग्न करते हैं
एक..
दो. ..ओ ओ
त त तीन......
चार........
पर लाचार।

लाचार है आदमी
महंगाई के आगे,
कीमतें
कसकर पकड़े हुए हैं
चीज़ों के पीछे
कैसे भागे?

फिलहाल तो नहाना है,
फिर ऑफ़िस जाना है।
पर नहाने से अच्छी है
आतंकवादी की गोली,
एक झटके में
मौत होनी थी, हो ली।
पर शिख से नख तक
जल का जाना !
कष्टपूर्ण नाहक नहाना!!
चलो
नाखून काटते हैं।
. .....पर
उन नाखूनों को
कैसे काटें
जो गड़े हैं

देश की छाती में?

'गंदे नाख़ूनों वाला हाथ
बन्नी में डाल के
भ्रष्ट कर दिया अचार'-
पत्नी डांटे!
वाह रे भ्रष्ट अचार!
वाह रे भ्रष्टाचार!!

वाह री आज़ादी
तूने कर दिया कमाल,
वाह रे पचास साल!
वाह वाह राजनैतिक स्वयंभू,
वाह वाह उनकी चाल !!

अचानक ग़ुसलख़ाने में
कॉकरोच का रूप धरकर
भूचाल आया,
अफ़रातफ़री सी मचाकर
पटले में समाया।

धड़कनों में
धक्का सा-लग्गा।
धीरे-धीरे
महायान से
सहजयान हुए
बाबू बांके बिहारी बग्गा-
यार कॉकरोच,
तेरे मेरे बीच

कैसा भय
कैसा संकोच?
मैं तुझसे डरूं
तू मुझसे डरे
ऐसा क्यूं है?
जो तू है
वो मैं हूं
जो मैं हूं
वो तू है।

मुसीबत में भागने वाला,
हल्की-सी आहट से
जागने वाला।
सख्याविहीन
सख़्त-जान,
अंतरंग प्रकोष्ठों का
अनचाहा मेहमान।
अदृश्य टांगों से
दोड़ने वाला,
हाफते-हांफते भी
होड़ने वाला।
अपनी कुढ़न में शांत,
पानी से भयाक्रांत।
हम दोनों का वजूद
वक्त की नालियों में
खो गया है,
तेरी तरह
मेरा भी खून
सफेद हो गया है।

अतर इतना है कि
मैं पटले के
ऊपर हूं
तू पटले के
नीचे है,
पर पूरा ज़माना
हम दोनों की
खिस्की खींचे है।

अचानक अवतरित अंतिम दृश्य,
स्नान वर्तमान हो गया
न रहा भविष्य।
ज्यों ही आई
श्रीमती जी की
पूर्ण पुर-प्रकंपी पुकार,
त्यों ही गिरी मग्गे से धार।
शून्य हुई बाल्टी
शून्य हुआ मग्गा,
इति श्री
स्नानित होते भए
बाबू बांके बिहारी बग्गा।

शौक़त मियां के पुतले

शौक़त मियां और उनके पुरखे
सदियों से बनाते आ रहे हैं
रामलीला के पुतले।

पुतले बनाने में
लग जाता है
परिवार समूचा,
हर बार बनाते हैं
पहले से ऊंचा।

बढ़ा देते हैं
थोड़ा सा रेट,
रावण का बनाते हैं
गुफ़ा जैसा पेट।

तीन तीन फुट की
एक एक मूंछ,
हनुमान जी की हज़ार फुट की पूंछ।
गोंद लेई गत्ता
और बांस की खपच्ची,
मिलकर बनाते हैं
बच्चे और बच्ची।

अबरी, पिपरपिन्नी और पटाखे
सलमे-सितारे भी
यहां वहां टांके।

पतले मोटे तार
सुतली और रस्सी,
जगह जगह
बड़े जतन से कस्सी।

शौक़त मियां बोले–
एक बार मेरी सलमा ने
रावण के कुंडल को
पालना समझकर
सबसे छोटे बेटे
अय्यूब को सुला दिया,
और मुहब्बत से झुला दिया।
तभी रावण के पुतले से
आवाज़ आई–
'अबे, कान में
गुलगुली क्यों करता है
मेरे भाई!
कितनी देर से
मेरे कान पे लदा है,
कुंभकर्ण, ला
कहां मेरी गदा है?
कुंभकर्ण बोला–
भाई साहब,
मुझे उठने में
कष्ट हो रहा है,
क्योंकि मेरे पेट पर
शौक़त मियां का
पूरा ख़ानदान
सो रहा है।'

इतना कहकर
शौक़त मियां हंसने लगे
वे भी
बच्चों जैसे लगने लगे।

ये बात मैंने आपको इसलिए बताई
कि मैंने उनके सामने
एक जिज्ञासा उठाई–

शौक़त मियां!
मेरे दिमाग़ में
एक सवाल उठता है,
जब आपके बनाए हुए
पुतले जलते हैं
तो आपको
कैसा लगता है?

– हां अशोक जी!
हम पुतले बनाने में
लगाते हैं
पूरा एक महीना,
बहाते हैं दिन–रात पसीना।
नहाते हैं न धोते हैं,
बहुत ही कम सोते हैं।
एक दो महीने की मेहनत
जब एक दो पल में
जल जाती है
फक्क से,
जी रह जाता है
धक्क से।

पतले मोटे तार
सुतली और रस्सी,
जगह जगह
बड़े जतन से कस्सी।

शौक़त मियां बोले–
एक बार मेरी सलमा ने
रावण के कुंडल को
पालना समझकर
सबसे छोटे बेटे
अय्यूब को सुला दिया,
और मुहब्बत से झुला दिया।
तभी रावण के पुतले से
आवाज़ आई–
'अबे, कान में
गुलगुली क्यों करता है
मेरे भाई!
कितनी देर से
मेरे कान पे लदा है,
कुंभकर्ण, ला
कहां मेरी गदा है?
कुंभकर्ण बोला–
भाई साहब,
मुझे उठने में
कष्ट हो रहा है,
क्योंकि मेरे पेट पर
शौक़त मियां का
पूरा ख़ानदान
सो रहा है।'

इतना कहकर
शौकत मियां हंसने लगे
वे भी
बच्चों जैसे लगने लगे।

ये बात मैंने आपको इसलिए बताई
कि मैंने उनके सामने
एक जिज्ञासा उठाई—

शौक़त मियां!
मेरे दिमाग़ में
एक सवाल उठता है,
जब आपके बनाए हुए
पुतले जलते हैं
तो आपको
कैसा लगता है?

— हां अशोक जी!
हम पुतले बनाने में
लगाते हैं
पूरा एक महीना,
बहाते हैं दिन-रात पसीना।
नहाते हैं न धोते हैं,
बहुत ही कम सोते हैं।
एक दो महीने की मेहनत
जब एक दो पल में
जल जाती है
फक्क से,
जी रह जाता है
धक्क से।

पर जब सुनते है
बच्चों की तालियां,
देखते हैं गालों पर
लालियां,
चेहरों पर
खुशियां और मुस्कान,
तो मिट जाती है
सारी थकान।

फिर हम भी लुत्फ़ उठाते हैं,
अपने हुनर को जलता देखकर
तालियां बजाते हैं।
पर जनाब अशोक साहब
कब
आख़िर कब जलेगा
फ़िरकापरस्ती का कुंभकर्ण
कब जलेगा
दिलों में दूरियां बढ़ाने वाली
हैवानियत का मेघनाद ?

मैंने कहा—
दिल और दिमाग़ में
रोशनी आने के बाद।

पास होने की प्रसन्नता

सिक्स्टी सिक्स में
पिताजी ने कहा था–
        अगर पी॰एम॰टी॰ में
        पास हो जाओगे
        तो इनाम में
        एच॰एम॰टी॰ की
        घड़ी पाओगे।

हमने पी॰एम॰टी॰ को
समझ लिया खेल,
इसलिए हो गए फेल।
पुरस्कार की जगह
पिताजी की फटकार,
आंखों में
आंसुओं की लड़ी,
और कैंसिल हो गई घड़ी।

अब नाइंटी सिक्स में
तीस साल बाद,
दीजिए हमें
मुबारकबाद!
कि जब
इतनी उमर
क्रॉस कर ली है,

तब कही जाके
टी॰एम॰टी॰ की परीक्षा
पास कर ली है।
अब देखते हैं,
पिताजी को मिलती हैं
आसुओं की लड़ियां,
या हमको मिलती हैं
पुरस्कार में,
ज़िंदगी से
कुछ और घड़ियां।

बैड नबर फ़ोर

बुड्ढा है,
अब किसी काम का नहीं,
धक्का देकर बाहर निकालो,
कब तक बीमारी के
नखरे सहो,
और कब तक संभालो!
लोग तो
ऐसा ही सोचते हैं अक्सर।
पर......
सर जी!
मेरा छः महीने का
बच्चा बीमार है,
समझिए कि वक्त की मार है।
भटकता रहता हूं
जाने कहां कहां जी!
उधर बेटा बीमार
इधर पिताजी!
घर से निकलो तो बत्तरा
बत्तरा से मूलचंद
दुकान पे न बैठो
तो हिल जाए
धंधे की किल्ली,
जाने कब
रस्ता काट गई बिल्ली।
आफ़तें सब एक साथ
आन के पड़ी हैं,

तब कही जाके
टी॰एम॰टी॰ की परीक्षा
पास कर ली है।
अब देखते हैं,
पिताजी को मिलती हैं
आंसुओं की लड़ियां,
या हमको मिलती हैं
पुरस्कार में,
ज़िंदगी से
कुछ और घड़ियां।

बैड नंबर फ़ोर

बुड्ढा है,
अब किसी काम का नहीं,
धक्का देकर बाहर निकालो,
कब तक बीमारी के
नखरे सहो,
और कब तक संभालो!
लोग तो
ऐसा ही सोचते हैं अक्सर।
पर......
सर जी!
मेरा छ: महीने का
बच्चा बीमार है,
समझिए कि वक्त की मार है।
भटकता रहता हूं
जाने कहां कहां जी!
उधर बेटा बीमार
इधर पिताजी!
घर से निकलो तो बत्तरा
बत्तरा से मूलचंद
दुकान पे न बैठो
तो हिल जाए
धंधे की किल्ली,
जाने कब
रस्ता काट गई बिल्ली।
आफ़तें सब एक साथ
आन के पड़ी हैं,

घर मे सुबह सुबह
हम तीनों भाइयों की
बहुएं
आपस में लड़ी हैं।
बुड्ढे की क्या है
वो तो एक दिन मरेगा,
पर बच्चे का
ख्याल नहीं करोगे
तो आगे धंधा कौन करेगा?
अब बताओ सर जी
इन औरतों को
कैसे समझाएं,
इन्हें किस तरह बताएं,
कि जब हम छोटे रहे होंगे
तब हमें यही बुड्ढा
बैद-हकीम को
दिखाता होगा,
हारी-बीमारी में
दवाई दिलाता होगा।
जैसी टीस अपने बेटे के लिए
उठती है हमें
ऐसी ही
इसके भी उठती होगी,
आज ये हो गया रोगी।
बूढ़ा है और अशक्त है,
जमाना तो स्वारथ का भक्त है।
लेकिन सर जी
बात की बात है--
दिन से ज्यादा भारी रात है।

बहुएं मतिमंद हैं,
तीन दिन से
तीनों भाइयों की
दुकानें बंद हैं,
धंधा चौपट
अस्पतालों के दंद-फंद हैं।
बच्चे को देखें
कि बुड्ढे को,
पुलिया को देखें
कि गड्ढे को?
बहुओं के साथ-साथ
हालात की ओर से भी
मना है,
पर सर जी
सबसे ऊपर तो भावना है।
जिन मां-बाप ने हमें पाला है,
जिनकी वजह से
हमारी जिन्दगी में उजाला है।
उन्हें अंधेरे गड्ढे में
कैसे छोड़ दें,
उनकी तरफ से
मुह कैसे मोड़ लें?
बहू के रिश्तेदार
सोचते हैं—
मै खामखां
इमोसन में बह रहा हूं,
जमाना बड़ा खराब है सर जी,
मै कोई
गल्त कह रहा हूं?

फुहारों सी नर्सें

– चलो,
थोड़ा और खांस लो।

– अब
लंबी-लंबी सांस लो।

– थोड़ा ऊपर खिसको।

– उधर देखते किसको?

– चादर सीधी करनी है।

– वाटर बॉटल भरनी है।

– दवाई कड़वी नईं,
चखो न!

– हाथ सीधा रखो न!

– मुड़ जाओ, पाउडर लगाना है।

– इधर नईं, घर जाके नहाना है।

– तुम एक्टिंग बहुत मारते हो
बाबा!

– ऊई बाबा!
जल्दी ठीक होना चाहते हो?

– फिर इतना क्यों कराहते हो?

चार छोटी-छोटी नर्सें,
बाबा पर
फुहारों सी बरसें।
कोई बाबा का
ब्लड-प्रैशर ले,
कोई खिलाए गोली,
बीच-बीच में हंसी
और
आपस की ठिठोली।

ग्लूकोज़ ड्रिप निरर्थक
आक्सीजन सिलिण्डर
बेकार!
बाबा में हो रहा था
त्वरित जीवन संचार।

दस दिन पहले
भरती हुए बाबा
मुस्कुराते बैठे रहे
नर्सों के आग्रह पर
हरगिज़ नहीं लेटे,
जीवन्त मुस्कानों के साथ
इधर-उधर हो लिए
बाबा के बेटे।

रस्ते पे आख

बत्तियां घर की
बुझा लीं उसने
उसने सुजा लीं
रो रो के
आंख।

अब
नया देवता
कहां ढूंढे
उसने मना लीं
सारी मन्नतें।

एक माचिस का
इरादा बनकर
उसने निकालीं
मन से
चिट्ठियां।

थपथपाने से
न होगा कुछ भी
उसने लगा लीं
सारी चटखनी।

सोचती है
ये हथेली

दोनों
उसने रचा लीं
वक़्त से पहले।

शायद
आके वो
माफ़ियां मांगे
उसने लगा लीं
रस्ते पे आंख।

आपके वास्ते

अनिश्चित है
आपके वास्ते तो
अनिश्चित ही है
वह दर्द
जो झोंपड़ी में
संचित है।

सोचना आपका कि
ठीक कर लेंगे
महज़
आंकड़ों से ही,
अनुचित है,
सरासर अनुचित है।

आलीजाह !
यह दर्द
दिया हुआ तो
आपका ही है,
और
हम परेशान हैं
यों ही
कि स्वरचित है।

सचनुमा
नुमाइश लगाकर
खुश हैं आप,

लेकिन यह दर्द
उस झूठ से भी
परिचित है।

दर्द जब फूटेगा,
तो बहुत कुछ टूटेगा,
आप अपने
भालों के
भोलेपन में
भूले हैं कि
भविष्य आपका
सुरक्षित है।

नन्हा सा मेमना

माता पिता से मिला
जब उसको प्रेम ना,
तो बाड़े से भाग लिया
नन्हा सा मेमना।

बिना रुके
बढ़ता गया
बढ़ता गया भू पर,
पहाड़ पर
चढ़ता गया
चढ़ता गया ऊपर।

बहुत दूर जाके दिखा
उसे एक बछड़ा,
बछड़ा भी अकड़ गया
मेमना भी अकड़ा।

दोनों ने बनाए
अपने चेहरे भयानक,
खड़े रहे काफ़ी देर
और फिर
अचानक–
पास आए
पास आए
और पास आए,

इतने पास आए कि
चेहरे पे सांस आए।

आंखों में देखा
तो लगे मुस्कुराने,
फिर मिले तो ऐसे
जैसे
दोस्त हों पुराने।

उछले कूदे नाचे दोनों
गाने गाए दिल के,
हरी हरी
घास चरी
दोनों ने मिल के।

बछड़ा बोला–
        मेरे साथ,
        धक्कामुक्की खेलोगे?
        मैं तुम्हें धकेलूंगा
        तुम मुझे धकेलोगे।

तो कभी मेमना धकियाए
कभी बछड़ा धकेले,
सुबह से शाम तलक
कई गेम खेले।

मेमने को तभी
एक आवाज़ आई,

बछड़ा बोला
ये तो मेरी
मैया रंभाई।

लेकिन कोई बात नहीं
अभी और खेलो,
मेरी बारी ख़त्म हुई
अपनी बारी ले लो।

सुध-बुध सी
खोकर वो
फिर से लगे खेलने,
दिन को
ढंक दिया पूरा
संध्या की बेल ने।

पर दोनों अल्हड़ थे
चंचल अलबेले,
ख़ूब खेल खेले
और
ख़ूब देर खेले।

तभी वहां गैया आई
बछड़े से बोली-
मालुम है तेरे लिए
कितनी मैं रो ली।
दम मेरा निकल गया
जाने तू कहां है,

जंगल जंगल भटकी हूं
और तू यहां है!

क्या तूने सुनी नहीं थी
मेरी टेर?

बछड़ा बोला—
खेलूंगा और थोड़ी देर!

मेमने ने देखे जब
गैया के आंसू,
उसका मन हुआ
एक पल को जिज्ञासू।

जैसे गैया रोती है
ले लेकर सिसकी,
ऐसे ही रोती होगी
बकरी मां उसकी।

फिर तो जी उसने खेला
कोई भी गेम ना,
जल्दी जल्दी घर को लौटा
नन्हा-सा मेमना।

जड़े और उड़ान

बात यही तो ख़ास है,
कि हमारी हर उड़ान की डोर
हमारी जड़ों के पास है।

जब भी अटक जाती है
कोई पतंग
वृक्ष के सबसे ऊपर वाले
पत्ते के पास
तो जड़ों में कुछ फड़फड़ाता है,
छटपटाहट भले ही ऊपर दिखे
पर संवेदन तो नीचे तक जाता है।

पक्षी जानता है
उसे वृक्ष से
कितना ऊंचा उड़ना है,
आकाश से
किस सीमा तक जुड़ना है।
व्योम उसका वर्तमान व्यतीत है
वृक्ष उसका निकट अतीत है,
भले ही सीमातीत हो आकाश
पर अपनी जड़ों पर टिका वृक्ष
उसका सच्चा मीत है।

एक बात नहीं जानती
पंखों की प्रविधि,

आकाशीय उड़ान के
तरग संदेशों
और जड़ों के रेशों
के बीच आती है
धरती की परिधि।
जिस पर जब हम
चल रहे होते हैं
तब वह भी चल रही होती है,
लेकिन कभी-कभी
जड़ बुद्धि
छोड़कर संवेदना को
या गिलगिली संवेदना
बुद्धि से मुंह मोड़कर
वही-वही दोहराती है
जो गतिहीन बात पहले से
चल रही होती है।

चलना होगा
धरती की चाल से आगे
निकलना होगा जड़ों से
फूटकर अंकुराते हुए ऊपर,
भू पर।

फिर है अनंत आकाश
चाहे जितना बढ़ें,
लेकिन बढ़ने की
सीमा तय करती हैं
जड़ें।

धरती भी शामिल होती है
जड़ की योजनाओं में
क्योंकि वृक्ष को
पकड़कर तो वही रखती है,
एक सीमा तक ही
बढ़ाती है वृक्ष को
क्योंकि
फलों का स्वाद चखती है।

डाल पर बैठा परिन्दा
ऊंचाइयों से जुड़ेगा,
अपनी ऊर्जाभर उड़ेगा।
उसे वृक्ष नहीं रोकता
रोकती हैं जड़ें,
पंख जब मुश्किल में पड़ें,
तो उन्हें
इसी बात को
समझना है,
कि धरती पर
जड़ों और उड़ानों के बीच
निरंतर मंजना है।

यहीं बजना है जीवन-संगीत
यहीं समय का रथ
सजना है,
यहीं चलना है उसे
इस चिंता के बिना
कि समय के अनेक रथों में

डाल पर बैठ जाए,
तब जड़ें खुश होती हैं
अपने कृतित्व पर,
वृक्ष के अस्तित्व पर।

लेकिन यदि
पहिए की
अगतिक ऐंठ जाए नहीं,
और डाल पर सुस्ताती
उड़ान को
और उड़ना भाए नहीं,
तब जड़ों को होती है
बहुत बेचैनी,
चेतना हो जाती है
कठोर और पैनी।
उसके कोमल रेशे कुलबुलाते हैं,
धरती के नीचे
बढ़ते ही जाते हैं
बढ़ते ही जाते हैं
पार कर जाते हैं
धरती की समूची गोलाई
और दूसरे छोर पर निकलकर
एक उड़ान में बदल जाते हैं।

हां, बड़ी बहुत बड़ी होती है
आकाश की सत्ता,
पर इससे कम नहीं होती
जड़ों की महत्ता।

सोचने की बात

एक्स वाई ज़ैड से
या सैक्स द्वारा
एड्स से फैलें
या एन्थ्रैक्स द्वारा
रोग तो रोग हैं।

मारत मारत मरें
या इमारत में
अफ़गानिस्तान
अमरीका में मरें
या पाकिस्तान
भारत में
लोग तो लोग हैं।

हम तो करेगे

गुनह करेंगे
पुनह करेंगे।
वजह नहीं
बेवजह करेंगे।
कल से ही लो
कलह करेंगे।
सुलगाने को
सुलह करेंगे।

जज़्बातों को
ज़िबह करेंगे।
हम ज़ालिम क्यों
जिरह करेंगे।
संबंधों में
गिरह करेंगे।
रस विशेष में
विरह करेंगे।

निर्लज्जों से
निबह करेंगे
जो हो, अपनी
तरह करेंगे।
रात में चूके
सुबह करेंगे।
गुनह करेंगे
पुनह करेंगे।

पचास के पाच

चौराहे पे हुई लाल बत्ती,
और मैंने स्टेयरिंग से हटा के हत्ती,
जैसे ही
कार का शीशा खोला,
'पचास के पांच'
--एक आदमी बोला।

मै शीशा चढ़ाने लगा,
वो तो
हाथ ही अंदर बढ़ाने लगा-
ख़रीद लो साब,
चीज़ लाजवाब!
टिशू पेपर,
ले लो सर!
मुंह पोंछने का कागज़,
दाम एकदम जायज़!
बहुत सस्ते रेट में,
ऐसा नहीं मिलेगा मार्केट में!
पचास रुपए में से
मेहनत का
सिर्फ़ एक रुपया कमाऊंगा,
कमाऊंगा,
हां कमाऊंगा!
भीख के वास्ते
रास्ते में
हाथ तो नहीं फैलाऊंगा!

मेन सोचा
बात इसकी सौ परसैंट रौंग है,
शायद ये भी कमाने का
कोई नया ही ढोंग है।
इसलिए टरकाने के लिहाज से,
मैं बोला
अपने टेलीविज़न वाले अंदाज से-

नागरिक ये जान गया है भैया!
कि माल की क़ीमत है
उनन्चास रुपैया।
एक रुपया
तुम्हारी जायज़ कमाई,
लेकिन मेरे नाजायज़ भाई!
तनिक ई त बतावा,
का हम और कछू नाहीं पौंछ सकत
मुंह के अलावा?
जैसे आंख या नाक!

वो बोला-

साब छोड़ो मज़ाक!
आंख, नाक, कान
कुछ भी पोंछो,
पर प्रश्न मत पूछो!

मैंने कहा-

कमाल है,
और यही तो सवाल है,
कि जब कोई चीज़ ख़रीदेंगे,
तो सवाल क्यों नहीं पूछेंगे?

अच्छा बताओ
क्या इनसे पोंछा जा सकता है
पसीना?

उसने झटके से हाथ बाहर खींचा
और तान कर सीना
बोला–

बाबूजी माफ़ करना,
इन काग़ज़ों से
मुमकिन नहीं है
पसीना साफ़ करना!
इनसे पोंछी जाती है
लिपस्टिक और क्रीम,
इनसे पोंछी जाती है
मुंह पर लगी आइसक्रीम!
इनसे पोंछे जाते हैं
निशान चॉकलेट के,
इनसे पोंछे जाते हैं
हाथ ऑमलेट के!
कुछ लिया न दिया,
ऊपर से टैम खराब किया।
बाबूजी!
जो इन कागज़ों को
ख़रीद के ले जाता है,
उसे पसीना ही कहां आता है?
लगता है आप वाकिफ़ नहीं हैं
हिन्दुस्तान की ज़मीन से,
यहां पसीना पोंछा जाता है
आस्तीन से।

पचास रुपए के
पांच डिब्बे बेचने में
जितना पसीना आएगा,
उसके लिए
ये सारा का सारा काग़ज़
कम पड़ जाएगा।
लोग जिसपर नाक-भौं सिकोड़ते हैं,
और नफ़रत से
मुंह पल्ली तरफ़ मोड़ते हैं,
सुन लो
मेरी बात सोलहों आने सही है,
कि मेहनत के पसीने की
महक से बढ़िया महक
इस धरती पर नहीं है।

हां,
बड़े लोगों को
पसीना आता है
सिर्फ़ जून में
और ग़र्दिश के ज़माने में,
मुझे आता है रोज़ाना
दो जून की रोटी कमाने में।

सवाल पूछते हो
पसीने पर,
अरे, लिखना है
तो काग़ज़ फेंक दो
लिखो सीधे मज़दूर के
सीने पर!

तुम करत बात पसीने की
कोई जुगत करो जीने की
पंद्रह दिवस जला बस चूल्हा
मेहनत हुई महीने की
सूरज आया सुखा न पाया
झिलमिल बूंद पसीने की
मोल लगाओ, बोली बोलो
इस अनमोल नगीने की
तुम करते बात पसीने की
कोई जुगत करो जीने की
करते बात पसीने की!

इतना कहकर
उसने जो घूरा,
मैं तो हिल गया पूरा का पूरा।
माथे पर पसीने के कण आ गए
महीन-महीन से,
उसके सामने ही पोंछ डाले
कुर्ते की आस्तीन से।
अरे,
ये तो मुझ मसखरे के साथ
मसखरी हो गई,
वो बोला-

बाबूजी!
गाड़ी बढ़ा लो
बत्ती हरी हो गई!

मैंने गाड़ी को आगे बढ़ाया,
पर चौराहा पार करते ही पाया

कि वो तो
मेरी बगल वाली
सीट पर बैठा
व्यंग्य से मुस्कुरा रहा था,
उसकी आंखों के दांतों में
कांच सा किरकिरा रहा था-
श्रीमान् अशोक!
हैरान हो कि
आ गया हूं बेरोकटोक!

मैंने सोचा-
अरे, ये तो
मेरा नाम भी जानता है!

उसने ठहाका लगाया-
बंदा तुम्हें
अच्छी तरह पहचानता है।
जानता है तुम्हारी गति
तुम्हारी इति तुम्हारा हास
तुम्हारा सारा इतिहास,
'पोल खोलक यंत्र' रहा होगा
कभी तुम्हारी जेब में
आजकल है मेरे पास।

तुम्हारे भीतर
जो भी कुछ अच्छा है
वो मैं हूं,
बिना घुन लगा गेहूं!
टाट में ही ठाट पाता हूं

पशमीने का,
तो, तुम ज़िक्र कर रहे थे
पसीने का!
बात पूरी नहीं कर पाया,
इसलिए अंदर चला आया।
और इसलिए भी आया कि
पसीना तुमने आस्तीन से पोंछा
रूमाल नहीं निकाला,
इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि
तुमने मेरे डिब्बे नहीं ख़रीदे
और माल नहीं निकाला।

मत सोचो कि कार में
अंदर कैसे आया हूं,
हक़ीक़त ये है कि
मैं तुम्हारा ही साया हूं।

बहरहाल
तुम कविसम्मेलनों में जाते हो,
आड़ी-तिरछी
कविताएं सुनाते हो,
कभी इस बात पे
ग़ौर फ़रमाते हो,
कि तुम्हारे शब्द
कितना असर कर पाते हैं?
नेताओं पर कसे गए व्यंग्य
कोई परिवर्तन लाते हैं?
क्या तुम्हारे शब्द
कोई करिश्मा दिखाते हैं?

सुन लो.
तुम्हारी इस फटटू सी कविता से
कुछ नहीं होना जाना,
अब तो किसी और ही
तरीक़े से
नीके सलीक़े से
बदलना होगा ज़माना!

अशोक भाई!
इंसान तो मरते ही रहते हैं
बंटवारे में, तूफ़ान में, भूकम्प में,
कभी हड़बड़ी में
कभी हड़कम्प में!
मृत्यु के आंकड़े कम नहीं हैं
और मुझे इसका
कोई ख़ास ग़म नहीं है।
ग़मज़दा तो ये बात कर रही है
कि आज इंसानियत मर रही है।

और तुम भी बोलो
कवि हो कहां के?
कलफ़ का कुर्ता पहने
कार में बैठे हो
सजे-संवरे नहा के।
ख़ुद बिकते हो
और बेचते हो ठहाके,
अरे,
जीवन तो हम जीते हैं
पसीना बहा के!

हा, उन्हें भी कभी-कभी
आता है पसीना,
जब कुंठित दिमाग़ को
दिख जाए कोई हसीना।

. . . या तब
जब शेयर मार्केट में
गिरावट आती है,
या पड़ौसी के घर में
अपने घर से ज़्यादा
तरावट आती है।

लेकिन तुम्हारे पसीने का
मेहनत से कोई सरोकार नहीं है,
पसीना तो उसे आता है
जो तुम्हारे लिए सड़क बनाता है
जिसके पास कार नहीं है।

इतना कहकर,
वो अचानक ग़ायब हो गया,
लगा जैसे ब्रह्मांड में
इंसानियत के नाम पर
पसीने की एक बूंद बो गया।

अगला चौराहा आया,
तो मैंने पाया-
कि सूरज अपनी पूरी ताक़त से
चिलचिला रहा था,
मै गाड़ी के बाहर

पचास के पाच डिब्बे
बेचने की कोशिश में लगा था
और वो मेरी गाड़ी चला रहा था।

-ले लो कद्रदानो,
मेहरबानो!
पांच डिब्बे हैं पचास के,
मेरी कविताओं के विन्यास के।
पहले में हास्य है
दूसरे में व्यंग्य है,
तीसरे में करुणा का रंग है।
चौथा डिब्बा है
मेरे शब्द चमत्कार का,
ये लीजिए पांचवां
मेरे सामाजिक सरोकार का।

अब ये आपके ऊपर है
चाहें तो
धूप में खड़े रहने की
सज़ा दीजिए,
और चाहें तो
इन पांच डिब्बों के अहसासात को
मेरे ज़ेहन के जज़्बात को
अपने दिल के
किसी नन्हे से कोने में
सजा दीजिए,
बहरहाल,
कविता ख़त्म हो गई है
तालियां बजा दीजिए!

देश की कन्या

कहे परिवेश- मैं धन्या,
कहे यह देश- मैं धन्या,
कलेजा क्लेश से कंपित
ये मैं हूं देश की कन्या!
अश्रुजल से हुई खारी,
कहा जाता मुझे नारी!
परा तक पीर की पर्वत,
कहा जाता मुझे औरत!
यहां हूं देश की कन्या!
वहां हूं देश की कन्या!
बहन, पत्नी, जननि, जन्या,
ये मैं हूं देश की कन्या!
इसी परिवेश की कन्या!

मैं सोनल हूं, मैं सलमा हूं
सुरैया हूं, मैं सरला हूं
मैं जमुना हूं, मैं जौली हूं
मैं रज़िया हूं, मैं मौली हूं
मैं चंदो हूं, मैं लाजो हूं
सुनीला हूं, प्रकाशो हूं
मैं कुंती हूं, मैं बानो हूं
मैं हुस्ना हूं, मैं ज्ञानो हूं
मैं राधा, रामप्यारी हूं
वतन की आम नारी हूं।
दुखों की क़ैद में लेकिन,
रहूंगी और कितने दिन?

न हू म बंदिनी सुन लो
न हू अवलबिनी सुन लो!
सृजन की शक्ति है मुझमें!
अतुल अनुरक्ति है मुझमें!
मैं बौद्धिक हूं, विलक्षण हूं!
त्वरा तत्पर प्रतिक्षण हूं!
मैं प्रतिभा हूं
मैं क्षमता हूं,
मैं जननी हूं
मैं ममता हूं!
सहारे की हथेली हूं,
कहा तुमने पहेली हूं!!

समझ पाए नहीं मुझको
सदा डरते रहे मुझसे,
इसी कारण दबाया
बस घृणा करते रहे मुझसे।
न हो जाए कहीं पर किरकिरी
यह भय तुम्हारी अस्मिता में
किरकिराता है,
मुझे मालूम है
डरता जो अंदर से
वही बाहर डराता है।

मगर सुन लो
तुम्हारा मन मेरे मन को
नहीं हरगिज़ समझ पाया,
तुम्हारे वास्ते तो थी
महज़ स्पंदनी काया!

ये माना, मैं प्रकृति की कल्पना के
काव्य की काया,
ये माना, मैं मही पर
महत्तम महिमामयी मनमोहिनी माया।
ये माना, रूप की
मैं चिलचिलाती धूप हूं लेकिन
धकेला कूप में तुमने
समझ कर एक सरमाया।
कठिन कर्त्तव्य कर्मों के गिना कर
हक़ कुतर डाले,
सहज उन्मुक्त मैं उड़ ही न पाऊं
पर कतर डाले।

मगर निज स्वार्थ में कुछ बेचते
तो चित्र मेरा
छापते हो तुम,
मेरे सौन्दर्य को
सम्पत्ति अपनी मानकर
आपादमस्तक
नख से शिख तक
लालची अपने लचीले
फालतू फीतों से
मुझको नापते हो तुम,
मगर जब मन करे मेरा
कि मेरी दिव्यता देखें
सभी मुझको निहारें तब
ज़माने की निगाहों की दुहाई दे
किसी ठेले सजे ढेले सरीखा
ढांपते हो तुम!

लगे जब दुह लिया दुहरा
दहन कर देह मेरी
हाथ अपने तापते हो तुम!

तुम्हारा कुंदमति कुंठन,
बनाता नित्य अवगुंठन।
तुम्हारी न्याय मीमांसा,
सदा देती रहीं झांसा।
गढ़ीं अनुकूल परिभाषा,
तुम्हारे सत्य की भाषा,
तुम्हारे धर्म की भाषा,
तुम्हारे न्याय की भाषा,
अब आकर जान पाई हूं,
भरोसों से अघाई हूं!

अभी भी सोचते हो तुम
कि दासी हूं मैं अनुगत हूं,
बराबर से अधिक हूं पर
महज़ 'तेतीस प्रतिशत' हूं!

यहां कुछ हैं जिन्हें
तेतीस भी कैसे गवारा हो,
कहा करते हैं प्रतिशत
बीस हो या सिर्फ़ बारा हो।
बताओ तो ज़रा ये दर्दे-सिर
क्यों व्यर्थ ढोते हो,
ये प्रतिशत में
कृपाएं देने वाले
कौन होते हो?

उधर चेहरो प है चेहर,
इधर बस ज़ख़्म हैं गहरे!
मै क्रोधी हूं, विरोधी हूं
मै चिंगारी प्रकट वन्या!
ये मैं हू देश की कन्या!
यहा हूं देश की कन्या!
वहा हूं देश की कन्या!
इसी परिवेश की कन्या!

तुम्हारे सामने हूं
सामना करती हुई मैं हूं,
तुम्हें सद्‌बुद्धि आए
कामना करती हुई मैं हूं!

तुम्हारी चाकरी में
नीद पूरी भी न सोई मैं,
सवेरे द्वार तक आंगन बुहारा
फिर रसोई में
लगी, बच्चे पठाए पाठशाला
फिर टिफ़िन–सज्जा,
गई खुद काम पर
आई नहीं तुमको तनिक लज्जा
कि लौटी तो तुम्हें फिर चाहिए
सेवाव्रती दासी,
तुम्हें क्या बोध
जीवन शोध
भूखी है कि वो प्यासी!
किया है काम मैंने भी
लगी मैं भी रही दिनभर

वो घर की देहरी हो
या कि हो
दूरस्थ का दफ़्तर।
कहीं मैं डॉक्टर हूं तो
कहीं करती वकालत हूं,
कहीं अध्यापिका या जज बनी
देती हिदायत हूं।
कहीं मैं सांसद हूं,
कहीं पर प्रतिभा परखती हूं,
मैं घर के बुज़ुर्गों का
बालकों का
ध्यान रखती हूं।
नहीं क्यों तुम मुझे
मेरा प्रतीक्षित मान देते हो,
कृपाएं ही लुटाते हो
फ़क़त अनुदान देते हो!

उतारो आवरण
छोड़ो ग़ुरूरों की ये गुरुताई,
प्रभाएं देख लो मेरी
तजो ये व्यर्थ प्रभुताई।

मुझे समझो, मुझे मानो,
मुझे जी जान से जानो,
प्रखर हूं मैं प्रवीणा हूं
मेरी ताक़त को पहचानो।

तुम्हारा साथ दूंगी मैं
तुम्हारी सब क्रियाओं में,

अगर हो आज मेरा हाथ
निर्णय-प्रक्रियाओं में।

कहा है आज मैंने जो
बराबर ही कहूंगी मैं-
बराबर थी, बराबर हूं
बराबर ही रहूंगी मैं।

प्रकृति ने इस युगल छवि को
मनोहारी बनाया है,
बराबर शक्ति देकर
शीश भी अपना नवाया है।

मै रचना हूं चराचर की,
मै नारी हूं बराबर की।
अगर मैं रूठ जाऊंगी
न पाओगे कोई अन्या!

ये मैं हूं देश की कन्या!
मै चिंगारी विकट वन्या!
बहन, पत्नी, जननि, जन्या,
धवल, धानी-धरा धन्या!
यहां हूं देश की कन्या!
वहां हूं देश की कन्या!
इसी परिवेश की कन्या!

व्हाइट टाइगर

मेरा शिकार करके
वो ले गया
यादों की मांद में।

हां,
पेड़ों की
पत्तियों के बीच
आकाश से
सीधा झपट्टा मारता है
इतनी ताकत है
चांद में।

अप्पन संस्कृति

यों तो सुखों की संख्या
अपरंपार है,
पर संसार के
दो ही सुखों में सार है।
इन्हीं दो सुखों के नीचे रहती है
हमारी कामनाओं की धुरी–
पहला सुख छप्पन भोग
दूसरा सुख छप्पन छुरी।
और
छप्पन छुरी के लिए छप्पन छुरा,
इसमें क्या बुरा!

लेकिन अप्पन ये मानते हैं कि
भोगों का जितना विन्यास है,
उन सबका योग
मुंछप्पन के पास है।
मुंछप्पन माने
सत्यमंगलम् के घने-घने जंगलों में
बिना पूंछ वाला
घनी-घनी मूंछ वाला-- अप्पन !
नाम है उसका ? . . . .

हां जनाब, वीरप्पन !
बिल्कुल सही जवाब!
अब आप दस करोड़ रुपए से
सिर्फ़ एक प्रश्न दूर हैं।

अपने लिए तालिया बजाइए
आप सब-के-सब ज्ञानी भरपूर हैं।
क्योंकि 'कौन नहीं है करोड़पति'
नाम के इस नाटक में,
अभिनेता राजकुमार की
रिहाई से पहले
वीरप्पन को देने के लिए
पांच करोड़ रुपए
तमिलनाडु में इकट्ठे हो चुके थे
और पांच करोड़ कर्नाटक में।
दो मुख्यमंत्रियों में थी होड़,
दोनों दे रहे थे
पांच-पांच करोड़।

फ़िफ़्टी-फ़िफ़्टी,
यानी एक लाइफ़ लाइन का
इस्तेमाल हो चुका है,
खेल अभी नहीं रुका है।
ये मत कहिएगा कि
सोचने का पूरा मौक़ा नहीं है।
करोड़ों का खेल है,
पांच दस पचास
या सौ का नहीं है।

तो आइए हम खेलते हैं-
'कौन नहीं है करोड़पति',
हालांकि, सुप्रीम कोर्ट के
नॉन-कमर्शियल ब्रेक्स के कारण
खेल की धीमी हो जाती है गति।

दाता से नाखून मत काटिए
बाल मत नोंचिए,
राष्ट्रीय समस्या है
आराम से सोचिए।

अरे जल्दियां कहां की हैं?
अभी तो आपकी
दो लाइफ़-लाइंस बाक़ी हैं!
दो-दो लाइफ़-लाइंस की सपोर्ट,
फोन अ फ्रैंड ऑफ़ सुप्रीम कोर्ट,
एण्ड जनता की राय!
लेकिन आप तो
सुप्रीम कोर्ट की सोचिए
जनता का क्या है
जनता साली भाड़ में जाय!

ऊपर-ऊपर हालांकि,
अभियुक्त को ढूंढने के
अभियान चल रहे हैं,
समर्थकों के
मुक्त गान चल रहे हैं।
लेकिन अंदर-अंदर
तै ये होना है कि
फिरौती का बकाया रुपया
उसके आतंकवादी साथियों समेत
कैसे पहुंचाया जाए और कब!
तो आपके लिए
अगला सवाल शुरू होता है
अब!

सवाल है--
हू इज़ वीरप्पन?
देखिए अपने-अपने
कम्प्यूटर्स की ओर
ऑप्शंस हैं फोर!
हू इज़ वीरप्पन?
'ए' वीर पुरुष,
'बी' गम्भीर पुरुष,
'सी' जंगल की हसीना,
'डी' शातिर कमीना।
आई रिपीट
'ए' वीर पुरुष,
'बी' गम्भीर पुरुष
'सी' जंगल की हसीना,
'डी' शातिर कमीना
सवाल है बड़े टॉप का,
बताइए क्या जवाब है आपका?

'डी'?
श्योर?
हण्ड्रैड परसैंट?
कॉन्फ़ीडैण्ट?
बोलिए 'हां'. . .
ताला लगा दिया जाए,
संशय को भगा दिया जाए?
बोलिए 'हां'. . .
'डी' शातिर कमीना
लॉक किया जाए?
बोलिए 'हां'. . .

ओ॰ के॰ !
लेकिन इस कवि को अब
एक बात कहने से
कोई न रोके!
और सुनिए
इस बार
मुझे आपकी 'हां' नहीं चाहिए
वहां से यहां तक
और यहां से वहां तक
समर्थन का
भरपूर स्वर आना चाहिए।
कि हमारे लोकतंत्र के
हर शातिर कमीने को
लॉक कर दिया जाना चाहिए।

ओ॰ के॰, कम्प्यूटर जी!
'डी' शातिर कमीने को
लॉक किया जाए।

दिल बेक़रार,
जवाब का इंतज़ार!
ओ हो, बैड लक
रौंग आंसर
आप बेकार में हो रहे थे खुश,
करैक्ट आंसर इज़ 'ए'
वीरप्पन माने वीर पुरुष।

उसकी वीरता की कहानियां
लोगों की निगाहों में गड़ती हैं।

दक्षिण की दो दो सरकार
उसके आगे नाक रगड़ती हैं।
उसने दो सौ से ज़्यादा
हाथी मारे,
हाथी दांतों की एवज में
करोड़ों कमाए करारे-करारे।
दस हज़ार टन से ज़्यादा
चंदन की तस्करी,
इस तरह करोड़ों-अरबों कमाना
समझ लिया मसख़री!
अरे! अपने भारत में
ये वीर पुरुषों का काम है,
डेढ़ सौ से ज़्यादा
हत्याएं कर दीं
सिर पर इनाम है।
पुलिस मिलिटरी
उसका लोहा मानती है,
और सुनने में आया है कि
जंगल में शेर
जब बीमार हो जाता है न
तो शेरनी
टोटका करने के लिए
मुंछप्पन की मूंछ का एक बाल
शेर के पैर में बांधती है।

हाथी उसके लिए फ़ालतू हैं,
इंसान उसके लिए पालतू हैं।
जो कहता है बंदूक से कहता है,
और ऋषिवत रहता है।

रिश्वत देने के लिए
मुंछप्पन के पास छप्पन छुरियां हैं
छप्पन भोग हैं,
उसकी मूंछों के अंटे में
शासन और प्रशासन के
अनगिनत लोग हैं।
उसकी आंखें मर्मभेदी हैं,
उसने छलनी की तरह
छातियां छेदी हैं।
एक तरफ़ की मूंछ मरोड़े
तो दो-दो मुख्यमंत्रियों की
नानी मर जाए,
दूसरी तरफ़ की मूंछ निचोड़े
तो कावेरी का पानी डर जाए।

हम जिसे पूजते मनाते हैं,
वीर अप्पन की ग़ज़ल गाते हैं।

एक जंगल है तेरी मूंछों में,
सब जहां राह भूल जाते हैं।

तूने बाजू हमारे तोड़ दिए
फिर भी नखरे तेरे उठाते हैं।

तू तो बारूद सा गुज़रता है
हम बुरादे से थरथराते हैं।

जल नहीं जंगलों में मिलता है
खून मिल जाए तो नहाते हैं।

हम जिसे पूजते मनाते है
वीर अप्पन की ग़ज़ल गाते हैं।

ग़ज़ल गाते-गाते आंखों में नीर है,
कम्प्यूटर की नजर में
वीरप्पन तू वीर है।
तेरे साथ नहीं होनी चाहिए सख़्ती,
जनता की राय तो
कोई मायने ही नहीं रखती।
शंका रखते हुए आत्मा अधीर है,
लेकिन वीरप्पन
अगर तू सचमुच वीर है।
तो राजकुमार को तो छोड़ दिया,
मित्रों की रक्षार्थ
समझदार निर्णय लिया,
अब हाथी मारना छोड़ दे,
चंदन काटना छोड़ दे,
बाकी बंधकों को छोड़ दे,
और घटना को नया मोड़ दे!
अपनी मूंछों में नई अकड़ ला,
और पड़ोसी देश के
शहंशाह को पकड़ ला।
फिर हम कम्प्यूटर के
सुर में सुर मिलाएंगे,
पड़ोसी देश से
अपनी सारी मांगें मनवाएंगे।
फिरौती में अपने लिए
मुहब्बत मांगेंगे,
आपस की मुरव्वत मांगेंगे!

खैर दोस्तो !
ये बात तो थी मज़ाक की,
लेकिन अगर हमें सचमुच चिंता है
देश की साख की,
तो आतंकवाद की
अप्पन-संस्कृति को मिटाना होगा,
इसे बढ़ाने वाले
कुर्सीनशीनों को हटाना होगा!

दोस्तो!
हमारे लोकतंत्र की
जिस तरह की डिज़ाइन है,
उसके लिए
सिर्फ एक ही लाइफ़-लाइन है।
वो है-
जनता की शिक्षा-जन्य जागरूक राय,
उसी से निकलेंगे सारे उपाय।
अप्पन फिर
अप्पन-संस्कृति को नहीं पनपाएंगे,
जनता चिंगारी बनेगी
तो जंगल दहक जाएंगे।

झाड़-झंखाड़ जब फुंक जाएंगे
तो नए सिरे से
बेला, चंपा, चमेली और गुलाब उगाएंगे,
इस चमन को महकाएंगे,
धरती की क्षितिज-परिधियों तक
अपनी ख़ुशबू फैलाएंगे!

चढ़ाई पर रिक्शेवाला

तपते तारकोल पर
पहले तवे जैसी एड़ी दिखती है
फिर तलवा
और फिर सारा बोझ
पंजे की उंगलियों पर आता है।
बायां पैर फिर
दायां पैर
फिर बायां पैर
फिर दायां।

वह चढ़ाई पर रिक्शा खैंचता है।
क्रूर शहर की धमनियों में
सभ्यों की नाक के
रूमाल से दूर
हरी बत्तियों को लाल करता
और लाल को हरा
वह
चढ़ाई पर
उतर कर चढ़ता है
पंजे से
पिंडलियों तक
बढ़ता है।

तारकोल ताप में
क्यों नहीं फट जाता

बारूद की तरह
क्यो नही सुलगता
वह
घाटियों चरागाहों
कछारों के छोर तक ?

रिक्शे के हैंडिल पर
कसाव की हथेलियों से
रिसते पसीने जैसी ज़िंदगी जीता है
कई बरसातों और
चैत बैसाखों में
तपे भीगे
पुराने चमड़े से हो गए
चेहरे पर
चुल्लू की ओक लगा
प्याऊ से
पीता है।

आस्तीन मुंह से रगड़
नेफ़े से निकाल नोट
गिनता है बराबर
मालिक के पैसे काट
कल उसे करना है
घर के लिए
पच्चीस रुपयों का
मनिऑडर।

क्रम

एक अंकुर फूटा
पेड़ की जड़ के पास।

एक किल्ला फूटा
फुनगी पर।

अंकुर बढ़ा
जवान हुआ,
किल्ला पत्ता बना
सूख गया।
गिरा
उस अंकुर की
जवानी की गोद में
गिरने का ग़म गिरा
बढ़ने के मोद में।

चेतन जड़

प्यास कुछ और बढ़ी
        और बढ़ी।

बेल कुछ और चढ़ी
        और चढ़ी।

प्यास बढ़ती ही गई,
बेल चढ़ती ही गई।

कहां तक जाओगी बेलरानी
पानी ऊपर कहां है?

जड़ से आवाज़ आई—
        यहां है, यहां है।

सपने की विडम्बना

एक सपना
एक सपनी
बातें करें अपनी अपनी
सपना अपनी सपनी को
यहां-वहां चूमे
सपनी भी मदमाती सपने में झूमे।

अंग प्रत्यंग उसका
सुबह की धूप के धान सा
कभी आलाप कभी तान सा
सा रे गा मा पा धा नी तक
निखर गया।

लेकिन
अत्यधिक आकुल-व्याकुल सपना
स्वरों के आरोह-अवरोह की
रस निष्पत्ति में
पहले ही बिखर गया।

चमत्कारी ज़ेवर

सबसे चमत्कारी ज़ेवर है
हथकड़ी!
जो छोटे आदमी के लिए
साइज़ में छोटी होती है
और बड़े आदमी के लिए बड़ी।

छोटे आदमी के पड़ी,
तो उसकी तो
ज़िंदगी भर के लिए
खटिया खड़ी!

बड़े आदमी को
पड़ने की संभावना भी हुई
तो. . . . .
उसकी अस्पताल में
खटिया पड़ी!!

कवित्त प्रयोग

रीतौ है कटोरा, थाल औंधौ परौ आंगन में
भाग में भगौना केऊ रीतौ रहिबौ लिखौ
सिल रूठी बटना ते, चटनी न पीसै कोई
चार हात ओखरी ते, दूर मूसला दिखौ
कोठे में कठउआ परौ, माकरी नै जालौ पुरौ
चूल्हे पै न पोता फिरौ, बेजुबान सिसकौ
कौने में बुहारी परी, बेझरी बुखारी परी
जैसे कोऊ भूत-जिन्न, आय घर में टिकौ।

कुरकी जमीन की, जे घुरकी अमीन की तौ
सालै सारी रात, दिन चैन नांय परिहै
सुनियौं जी आज, पर धैधका सौ खाय
हाय, हिय ये हमारौ नैंकु धीर नांय धरिहै
बार बार द्वार पै निगाह जाय अकुलाय
देहरी पै आज वोई पापी पांय धरिहै
मानौ मत मानौ, मन मानै नांय मेरौ, हाय
धौंताएं ते कारौ कौआ कांय-कांय करिहै।

फुनगी पर
भंवरे का नाच-नाच
धीरे-धीरे पेड़ से उतर।

ऐसा कर
कह एक ही बात
कई-कई बार।

अहसास की रग
मानो सितार का तार।

है बहुत मुश्किल
मगर हो जाय,
मान लो स्वर
खेत के खलिहान के घर जाय।
घंटियां बांधे हवा का
बाजरे के खेत न जाना
बाली-बाली से टकराना
और
टकराते-निकल आते
लाख-लाख दानों का
कांसे की थाली पर
बिखर जाना
झाला / तराना।

तार का रग अहसास
सितार की रग
अहसास के बहुत पास
राग।

सुदूर कामना

सारी ऊर्जाएं
सारी क्षमताएं खोने पर,
यानि कि
बहुत बहुत
बहुत बूढ़ा होने पर,
एक दिन चाहूंगा
कि तू मर जाए।
(इसलिए नहीं बताया
कि तू डर जाए।)

हां उस दिन
अपने हाथों से
तेरा संस्कार करूंगा,
उसके ठीक एक महीने बाद
मैं मरूंगा।
उस दिन मैं
तुझ मरी हुई का
सौंदर्य देखूंगा,
तेरे स्थाई मौन से सुनूंगा।

क़रीब,
और क़रीब जाते हुए
पहले मस्तक
और अंतिम तौर पर
चरण चूमूंगा।

अपनी बुढिया की
झुर्रियों के साथ-साथ
उसकी एक-एक ख़ूबी गिनूंगा
उंगलियों से।
झुर्रियों से ज़्यादा
ख़ूबियां होंगी
और फिर गिनते-गिनते
गिनते-गिनते
उंगलियां कांपने लगेंगी
अंगूठा थक जाएगा।

फिर मन-मन में गिनूंगा
पूरे महीने गिनता रहूंगा
बहुत कम सोऊंगा,
और छिपकर नहीं
अपने बेटे-बेटी
पोते-पोतियों के सामने
आंसुओं से रोऊंगा।

एक महीना
हालांकि ज़्यादा है
पर मरना चाहूंगा
एक महीने ही बाद,
और उस दौरान
ताज़ा करूंगा
तेरी एक-एक याद।

आस्तिक हो जाऊंगा
एक महीने के लिए

बस तेरा नाम जपूगा
और ढोऊंगा
फालतू जीवन का साक्षात् बोझ
हर पल तीसों रोज़।

इन तीस दिनों में
कागज़ नहीं छूऊंगा
क़लम नहीं छूऊंगा
अखबार नहीं पढ़ूंगा
सगीत नहीं सुनूंगा
बस अपने भीतर
तुझी को गुंजाऊंगा
और तीसवीं रात के
गहन सन्नाटे में
खटाक से मर जाऊंगा।

ख़ुद खादी

जिसने दिलाई थी आज़ादी
वो खादी
तभी तक पवित्र थी
और भारत के
जन–जन की मित्र थी
जब तक ख़ुद
काती
बुनी
सिली
और धोई जाती थी
ख़ुद सुखाई
और फिर से
ख़ुद भिगोई जाती थी।

लेकिन जब से
खादी कलफ़ लगकर
प्रैस होने लगी
देश की जनता
सप्रैस होने लगी।

अधन्ना सेठ

रुपया देकर चीज़ ख़रीदी
बाकी बची अठन्नी,
आठ आना दे चीज़ ख़रीदी
बाकी बची चवन्नी,
चार आना दे चीज़ ख़रीदी
बाकी बची दुअन्नी,
दो आना दे चीज़ ख़रीदी
बाक़ी बची इकन्नी
एक आना दे चीज़ ख़रीदी
बाकी बचा अधन्ना
उसमें भी कुछ चीज़ आ गई
ताक धिना धिन धिन्ना।

छः छः चीज़ें पाकर मुन्ना
ठाट हो गए ठेठ,
अकड़े-अकड़े घूमा करते
बने अधन्ना सेठ।

लेकिन मेरे मुन्ना,
ग़ायब हुआ अधन्ना!
गायब हुई इकन्नी,
गायब हुई दुअन्नी,
ग़ायब हुई चवन्नी,
गायब हुई अठन्नी,
बाकी बचा रुपैया,

जिसकी मेरे भैया
मरी हुई है नानी,
साफ हवा भी नहीं मिलेगी
और न ताज़ा पानी!

खाना-पीना करना हो तो
लेना होगा लोन,
एक रुपए में
कर सकते हो
केवल टेलीफ़ोन!

पल-पल छिन-छिन
ट्रिन-ट्रिन ट्रिन ट्रिन।
कार चाहिए
या टेलीफ़ोन चाहिए,
लोन चाहिए जी
लोन चाहिए।

— हलो,
कौन बोल रहे हैं जी?
धन्ना सेठ!

— ना भैया
भूतपूर्व अधन्ना सेठ!

और ले लो मज़े

बारह बजे
बीच पर
रेत और पानी के बीच चले!

सवा बारह से एक
ठंडे पानी के
धुआंधार ज़लज़ले!!

एक से दो
बीच टावल्स पर
सीधी धूप के तले!!!

और दो बजे जब
गर्म तपती रेत पर
छाया की ओर दौड़ते हुए
ख़ूब तलवे जले. . .
तो हम चारों के
फिर से
बारह बजे!!!!

और ले लो मज़े!!!!!

बूढ़ा पेड़

एक बूढ़ा पेड़ है
सिडनी की
ऐनैण्डेल स्ट्रीट पर,
लेकिन नई-नई नुकीली
हरी-हरी
प्यारी-प्यारी
पतली-पतली
लम्बी-लम्बी
कोमल-कोमल पत्तियां हैं
उसके बहुत ऊंचे
किरीट पर।

तुम्हें तो ख़ैर
वो पत्तियां
बहुत दूर जाकर
दूरबीन से ही दिखेंगी,
पर चूंकि
मैं एक अच्छा कवि हूं
इसलिए
फुटपाथ पर खड़े-खड़े
बड़ी आसानी से
इतना ऊंचा देख पाया।
वो पेड़ है
इस गली का
सर्वश्रेष्ठ सरमाया।

सबसे पुराना,
यहां रहने वाले
नानाओं का भी नाना।
गर्व से तना है
भारी मूल स्तंभ पर
तना-दर-तना है।

पर अफ़सोस. . .
अफ़सोस क्या!
कमाल है,
मज़बूती के बावजूद
बड़ी कोमल छाल है।
चाहो तो यों ही
अंगूठे और उंगली से
पकड़कर
छील लो उसकी
एक के बाद एक पर्त!

लेकिन
मैं शर्त लगाता हूं
जितना ही तुम
उसकी
ऊपरी छाल को छीलोगे
अंदर उसकी
मज़बूती बढ़ेगी,
कुदरत नहीं बढ़ाएगी
तो वो खुद
अपने अंदर से बढ़ाएगा।

बहरहाल
उसे कितनी ही
गिलहरियों को
ऊपर तक चढ़ाना है।

धरती के मस्तक पर
रखा हो
जैसे किसी हाथी का पैर
धरती को सताए बग़ैर।

क्योंकि मैं जानता हूं
जितना वो धरती के ऊपर
मस्त कलंदर है,
उतना ही गहरा प्रसन्न
धरती के अंदर है।

तुम तो दूरबीन से भी
नहीं देख सकते
उसके अंदर की हंसी
खुशी उसके रेशों में धंसी।

पर मैं देख सकता हूं
चूंकि एक अच्छा कवि हूं
और उसका नया-नया दोस्त भी
हर्षित हूं कि
पैन की पकड़ के पीछे
हथेली पर उसका
ताज़ा स्पर्श है।

याद रखूगा कि
ऐनैण्डेल स्ट्रीट पर
वुडग्रोव लॉज के सामने खड़ा है,
मै जानता हूं कि
जितना फुटपाथ के ऊपर है
उतना ही ज़मीन में गड़ा है।

अरे, मुझे उसका नाम नहीं पता
तुम जानते हो तो बताना
मैने तो
बडा लम्बा-सा नाम रख लिया है–
'गली के निवासियों के नानाओं का नाना'।

आज उससे मिलकर
बडा मजा आया!
पर, मैं कैसा 'अच्छा' कवि हूं
जो उससे
नाम भी नहीं पूछ पाया!!

ओ बूढ़े पेड़!
मै बूढ़ा नहीं हूं
फिर भी तेरी उम्र
मुझसे ज़्यादा है,
चल कल मिलते हैं,
अभी तो बेटे के साथ
सिटी घूमने का इरादा है।

कारगिल शहीदों के नाम

सोफ़े पर बैठे हों
या खाने की मेज़ पर,
ज़मीन पर बैठे हों
या सेज पर,
सच तो ये है कि
टी०वी० ने उस साल
बहुत रुलाया,
जब भी तिरंगे में लिपटा
कोई ताबूत आया,
उस जवान
महान शहीद की याद में
मूक सी हूक उठी
दिल की भरी बंदूक भी
अचूक उठी।

जवानों के अंग-भंग
क्षत-विक्षत कटे हुए,
लो फिर कुछ ताबूत आ गए
तिरंगे में लिपटे हुए।

बर्फ़ीली खड़ी चट्टान पर
बुलैटप्रूफ़ जैकिट नहीं
भोजन के पैकिट नहीं
हजारों सुइयां चुभाती
हवा के थपेड़ों में

ब़र्फ ही ब़र्फ़ के बीच
इक्का-दुक्का पेड़ों में
रास्ता बनाते हुए,
जयहिन्द गाते हुए,
बिना रसद-रोटी के
चोटी तक जाते हुए,
भारत की परिपाटी
घाटी में गुंजाते हुए,
मेरे देश के
नौजवान सिपाही,
अभी तो तू ब्याहा गया था
फिर से मौत ब्याही!

अद्‌भुत प्रचंड
तेरा तेज शौर्य अचल प्रखर
पाप छायाओं से
मुक्त किए धवल शिखर
विजय पाई तूने
तूने हार नहीं मानी
और स्वयं
बन गया कहानी।

पल नहीं बीते
पिछली घटना को
घटे हुए
लो
फिर कुछ ताबूत आ गए
तिरंगे में लिपटे हुए।

ब्रह्माड जान गया
कि भारत एक भावना है
न कि सिर्फ़ नाम है
और भावना का
भाषा में अनुवाद करना
एक टेढ़ा काम है।

ताबूत में लेटे,
मेरे देश के बेटे!
गर्व से मुस्कुराते आंसुओं का
तुझको
शत-शत प्रणाम है।